गरजत-बरसत अध्याय 2

हिन्दी ADDA

असग़र वजाहत

गरजत-बरसत अध्याय 2

मैं सिगरेट खरीदकर मुड़ा ही था कि मोहसिन टेढ़े के दीदार हो गये। दिल्ली की बाज़ार में कोई पुराना मिल जाये तो क्या कहने। मोहसिन टेढ़े ने भी मुझे देख लिया था और उसके चेहरे पर फुलझड़ियां छुट रही थीं।

यार तुम कहां रहते हो. . .कसम खुदा की बड़ा गुस्सा आता है तुम्हारे ऊपर।" मोहसिन आकर लिपट गया। सुना तो था. . .जैदी कह रहा था कि तुम दिल्ली ही में हो और ;नेशन` में हो. . .

"तुम सुनाओ यार मोहसिन क्या हाल है?"

"सब फस्ट क्लास है।"

"क्या कर रहे हो?"

वह हंसने लगा। ऐसी हंसी जिसमें शर्मिन्दगी भी शामिल थी।

"यार मैं सुबह यहीं कनाट प्लेस आ जाता हूं। 'बंकुरा` में लंच लेता हूं. . .एक चक्कर सर्किल का लगाता हूं. . .फिर अमरीकन लायब्रेरी में बैठ जाता हूं. . .शाम को मैक्समुलर भवन में कोई फिल्म देख लेता हूं. . रात दो रुपये वाली टैक्सी पकड़ कर आर.के.पुरम चला जात हूं।" वह फिर शर्मिन्दगी मिश्रित हंसी हंसने लगा।

मुझे यह सब सुनकर हैरत नहीं हुई। मोहसिन टेढ़े के बारे में हम सबको हॉस्टल के दिनों से पता था कि वह अच्छे खासे खाते-पीते जमींदार खानदान से ताल्लुक रखता है।

मैं हॉस्टल के कमरा नंबर तेईस में था और मोहसिन टेढ़े चौबीस में था। मुझसे एक साल जूनियर होने की वजह से पहले तो डरा-डरा रहा करता था फिर दोस्ती-सी हो गयी थी और अक्सर शामें 'कैफे डी फूस` या 'अमीरनिशां` में साथ-साथ गुजार लेते थे। बचपन में उसे पोलियो का कुछ असर हो गया जिसकी वजह से टाँगों मे कुछ टेढ़ापन आ गया था।

लेकिन उसका नाम मोहसिन टेढ़े सिर्फ टांगों के टेढ़ेपन की वजह से पड़ जाता तो बहुत मामूली बात होती। उसमें और कई तरह के टेढ़ेपन थे और शायद अब भी होंगे। पहला टेढ़ापन तो यह नजर आया कि उसने प्रीयूनिवर्सिटी क्लास तीन बार पास की। हर बार 'कम्बीनेशन` बदल जाता था। पहले साल फिजिक्स, कैमिस्ट्री, बाटनी से की, पास हो गया। लेकिन अगले साल सब्जेक्ट बदल कर प्रीयूनिवर्सिटी क्लास का इम्तिहान दिया। तीसरे साल भी यही किया। हम लोग उसे प्रीयूनिवर्सिटी मास्टर कहने लगे थे और उसका ये रिकार्ड बन गया कि जितनी बार उसने प्रीयूनिवर्सिटी पास की है उतनी बार किसी और ने नहीं की हैं।

मोहसिन टेढ़े ग़ज़ब का कंजूस था और कभी-कभी खूब पैसा उड़ाता था। उसे अपने ही रिश्तेदारों की एक लड़की से इश्क हो गया था। लड़की बहुत समझदार थी। मोहसिन टेढ़े को इश्क आगे बढ़ाने की सलाहें पूरा हॉस्टल दिया करता था। एक बार सभी लड़कों ने तय किया कि मोहसिन टेढ़े को चाहिए कुछ महंगे किस्म के परफ्यूम लड़की को तोहफ़े में पेश करे। मोहसिन टेढ़े परफ्यूम खरीद दिल्ली चला गया था और कोई तीन-चार सौ के परफ्यूम ले आया था। ये लड़की को पेश किए गये थे जिसने इन्हें कुबूल कर लिया था। उसके बाद हॉस्टल ने राय दी थी कि अब मोहसिन टेढ़े को चाहिए कि लड़की को फिल्म दिखाने ले जाये और सिनेमा देखने के दौरान से उसे शादी का प्रस्ताव रख दे। मोहसिन टेढ़े ने यही किया था लेकिन लड़की ने न सिर्फ इंकार किया था बल्कि उस पर नाराज़ भी हुई थी और उठकर चली गयी थी। इस पर हॉस्टल की राय बनी थी कि मोहसिन टेढ़े कम से कम अपने परफ्यूम तो वापस ले आयें। मोहसिन टेढ़े ने ऐसा ही किया था। परफ्यूम वापस लेकर वह हॉस्टल आया था तो उदास था। इश्क में नाकाम लोग शराब पीते हैं। यह सोचकर हॉस्टल ने मोहसिन टेढ़े को हॉस्टल ने शराब पीने की राय दी थी। शराब ने नशे में उसे पता नहीं क्या सूझी थी कि उसने परफ्यूम की दोनों बोतलें हॉस्टल के हर लड़के पर 'स्प्रे` कर दी थीं। और फिर खाली बोतलों को बरामदे में तोड़ डाला था।

मोहसिन टेढ़े ने तीन बार प्री यूनिवर्सिटी करने के बाद इंजीनियरिंग

में डिप्लोमा कर लिया था। लेकिन ये तय था कि वह वैसी नौकरी नहीं करेगा जो डिप्लोमा करने के बाद मिलती है। क्योंकि ज़मीन जायदाद आम और लीची के बागों

से उसे हज़ारों रुपये महीने की आमदनी होती थी और वह अकेला है। वालिद का इंतिकाल हो गया और उसकी मां उसे अलीगढ़ इतना पैसा भेजा करती थीं कि उससे पांच लोग पढ़ लेते।

'तो मतलब वही कर रहे हो अलीगढ़ में किया करते थे।` मैंने कहा।

'नहीं यार . . . मैं सोचता हूं सीरियसली फ्रेंच पढ़ डालूं?` वह बोला।

'क्यों क्या यहां फ्रेंच की क्लास में लड़कियां काफी आती है।` मैंने सादगी से पूछा।

वह हंसने लगा, 'हां यार बात तो यही है।`

'ये बताओ, रहते कहां हो?`

'मस्जिद में`, वह हंसकर बोला।

फिर वही टेढ़ापन. . .'अबे मस्जिद में कौन रहता है।`

'यार कसम खुदा की. . .आर.के. पुरम की मस्जिद में रहता हूं।` वह हंसने लगा। 'बड़े सस्ते में कमरा मिला है। वो लोग मुसलमान को ही कमरा देते हैं। बीस रुपये किराया देता हूं. . .पर एक बात है यार।`

'क्या?`

'मस्जिद में दो ग्रुप हैं। दोनों में मुकद्दमा चल रहा है। मौलवी अफ़ताब जिन्होंने मुझे कमरा दिया है, उन्होंने गवाही देने का वायदा भी ले लिया है।`

'तो फंसोगे झंझट में. . .`

'यार मौका आयेगा तो कमरा छोड़ दूंगा।` वह हंसकर बोला।

मैं उसकी समझदारी पर हैरान रह गया लेकिन उसके लिए इस तरह सोचना नया नहीं है। वह ऐसा ही करता आया है।

'चलो कमरे चलो. . .वहीं बैठकर बातें करते हैं`

'यार बसों में इस वक्त बड़ी भीड़ होगी?`

'स्कूटर से चलते हैं।` मैंने कहा।

यार किराया तुम ही देना. . .आज मेरे पास पैसे नहीं हैं।` उसने लाचारी से कहा।

'हां. . .हां ठीक है. . .पैसे मैं ही दूंगा।` मुझे यह अच्छी तरह मालूम है बल्कि यकीन है कि पैसे उसके पास हैं। लेकिन वह अपने पैसे बचाना चाहता है। पता नहीं क्यों उसे यह गहरा एहसास है कि पूरी दुनिया उसके पैसे लूटने के चक्कर में है। और पैसों को किसी भी तरह बचाकर रखना उसकी जिम्मेदारी है। मुझे याद आया एक बार हॉस्टल में पता नहीं कैसे किसी लड़के ने उसके पांच रुपये उधर ले लिए थे और नहीं दे रहा था।

मोहसिन टेढ़े ने अपने पांच रुपये वसूल करने के लिए ज़मीन आसमान एक कर दिया था। वार्डेन से शिकायत की थी। सीनियर लड़कों के सामने रोया-गाया था और आखिरकार इस पर भी तैयार हो गया था कि लड़का एक रुपये महीने के हिसाब से पांच रुपये वापस कर देगा।

'तो ये है तुम्हारा घर?`

हां सदर दरवाज़ा. . .कभी बंद नहीं होता। ताला लगा ही रहता है लेकिन पूरा का पूरा दरवाज़ा चौखट समेत अलग हो जाता है। इधर बाथरूम और किचन है। मेरे पीछे पता नहीं कौन-कौन बाथरूम का इस्तेमाल कर जाता है। किचन में स्टोव और चाय का सामान है।

'चाय पियोगे?`

'हां बनाओ।`

'दूध नहीं है।`

'अरे तो फिर चाय में क्या मज़ा आयेगा।`

'पड़ोसी से मांग लाऊं?`

मैं उठने ही वाला था कि बशीर एक ट्रे में दो कप चाय लेकर आ गया।

'अरे तुम चाय ले आये?`

'आपा ने भेजी है।` बशीर चाय देकर चला गया तो मोहसिन टेढ़े ने अजीब टेढ़ी निगाहों से मेरी तरफ देखा।

'क्या मामला है साजिद।`

'यार पड़ोस में इकराम साहब रहते हैं, ये उनका लड़का है

बशीर. . . ।`

'आपा के बारे में बताओ यार।`, वह हंसा।

'यार इकराम साहब की लड़की है। पता नहीं ये लोग कैसे हैं। एक दिन इकराम साहब आये. . .कोई जान न पहचान. . .सौ रुपये उधार ले गये. . .ये लड़का आता रहता है. . .जब मैं घर में नहीं होता तो आपा आकर कपड़े धो जाती है।`

'ठाठ हैं तुम्हारे।`

'यार ठाठ तो नहीं हैं. . .मैं तो कुछ घबरा रहा हूं।`

'आपा हैं कैसी?`

'आज तक देखा नहीं।`

'क्यों झूठ बोलते हो।`

'नहीं यार. . .झूठ क्यों बोलूंगा।`

शाम होते-होते तय पाया कि जामा मस्जिद के इलाके में चलकर खाना खाया जायेगा। प्रोग्राम तय होने के बाद मोहसिन हिसाब-किताब तय करने लगा। उसने

कहा कि स्कूटर का किराया तो वह दे नहीं सकता। खाने का बिल शेयर करेगा लेकिन जो वह खायेगी उसी का पेमेण्ट करेगा। मैं अपना पेमेण्ट खुद करूं। मैंने हंसकर कहा, चलो ठीक है। खाने का पेमेण्ट मैं ही कर दूंगा। इस पर वह बोला कि हां तुम्हें 'द नेशन` में नौकरी मिली चलो उसी को 'सेलीब्रेट` करते हैं।

खाने के दौरान वह बताता रहा कि उसके बहनोई की निगाह उसकी जायदाद पर है। सब उसे लूट खाना चाहते हैं। लेकिन उसने यह तय कर किया है कि धीरे-धीरे पूरी जायदाद बेचकर पैसा खड़ा कर लेगा और दिल्ली शिफ्ट हो जायेगा। मैं उसकी हां में हां मिलाता। सोचा मुझ पर क्या फर्क पड़ता है। जो चाहे करे।

उसके चेहरे से जवानी के अल्हड़ दिनों की छाया हट गयी है लेकिन आकर्षण में कोई कमी नहीं आयी है। बाल कुछ बढ़ा लिए हैं और लंदन में रहने की वजह से रंग कुछ ज़्यादा साफ हो गया है लेकिन दिल वैसा ही है। मिज़ाज वैसा ही है। वह कल ही रात आया है, अकबर होटल में ठहरा है। सुबह-सुबह टैक्सी लेकर मेरे कमरे पहुंच गया था मुझे यहां पकड़ लाया है। कहता है दफ्तर से आज छुट्टी ले लो। चलो दिनभर दिल्ली में मौज करते हैं। करीम में खाना खाते हैं। कनाट प्लेस में टहलते हैं। किसी सिनेमा हाल में बैठ जायेंगे। शाम को किसी बार में खूब पियेंगे और रात में चलेंगे मोती महल। कल राजी आ रही है इसलिए मैं 'बिजी` हो जाऊंगा।

"ले ये देखो तुम्हारे लिए लाया हूं।" उसने एक पैकेट मेरी तरफ उछाल दिया। दो कमीजें, इलेक्ट्रिक शेवर, दो टाइयां, चाकलेट. . .

"सुनो यार साले शकील को फोन करके बुला लेते हैं. . .मज़ा आयेगा. . .हम एक दिन के लिए अलीगढ़ भी जा सकते हैं. . .पांच साल हो गये यार. . .अलीगढ़ छोड़े", अहमद बोला।

"लो फोन करो", मैंने शकील का नंबर दिया। वह फोन मिलाने के लिए आपरेटर से बात करने लगा।

फोन मिला और लाइन पर शकील आया तो वह चिल्लाया "अबे साले चूतिया क्या कर रहा है. . .मैं. . .मैं कौन हूं. .. अब मैं तेरा बाप हूं अहमद. . .कल ही लंदन से आया हूं. . .साजिद के साथ बैठा हूं . . .तुम बेटा ये करो कि आज रात की गाड़ी पकड़ो और सीधे दिल्ली आ जाओ. . .मीटिंग? अब ऐसी मीटिंगे बहुत हुआ करती हैं. . .जानता हूं साले तुम नेता हो गये हो. . .न आये तो अच्छा न होगा. . .समझो।"

अहमद की वही आदतें हैं पैसा इस तरह ख़र्च करता है जैसे पानी बहा रहा हो। जो प्रोग्राम बना लेता है वह किसी भी तरह पूरा ही होना चाहिए। शाम जब उसे चढ़ गयी तो बताने लगा कि वह इन्दरानी को तलाक दे रहा है। मैं सकते में आ गया। लेकिन 'क्यों` पूछने पर उसने बताया कि वह राजी रतना से प्यार करने लगा है। हो सकता है कि यह बात मेरी समझ में इसलिए न आई हो कि मैं पूरी प्रक्रिया से परिचित नहीं था। मुझे यह पता था कि आठ साल पहले मैं उसकी शादी में कलकत्ता गया था जहां इन्दरानी से उसने ब्रह्मसमाज के अनुसार शादी की थी। मंत्र अंग्रेज़ी में पढ़े गये थे। उसके बाद लखनऊ में निकाह हुआ था। दिल्ली में सिविल मैरिज हुई थी। वह इन्दरानी पर जान दिया करता था। बीच में कोई दो साल पहले वह राजी रतना को लेकर केसरियापुर आया था तो मैं यही समझा था, मौज मस्ती मार रहा है। लेकिन यह तो सोच भी न सकता था कि इन्दरानी को, जिसने अपने चाचा के माध्यम से

उसके लिए विदेश मंत्रालय में नौकरी दिलाई है, उसे इतनी आसानी से 'टाटा` कर देगा।

"लेकिन हुआ क्या?"

"होना क्या था यार राजी के बिना मैं नहीं रह सकता। मैंने यह बात साफ इन्दरानी को बता दी. . .पहले तो वह बोली यह 'फैचुएशन` है। पर साल भर बाद समझ गयी कि मैं उसके साथ नहीं रहूंगा. . .मैंने उसके साथ 'सोना` बंद कर दिया था।"

"उसने तुम्हें नौकरी. . .वह भी भारत सरकार के विदेश. ."

"यार नौकरी कोई न कोई किसी न किसी को दिलाता ही है। इसका मतलब गुलामी तो नहीं होता।"

"हां ये तो ठीक है. . .लेकिन. . .।"

"लेकिन क्या?"

"तुम्हारे बेटे का क्या होगा।"

"ओ. . .प्रिंस चार्ल्स. . .हम लोग उसे प्रिंस चार्ल्स कहते हैं. . .वह हॉस्टल में चला जायेगा. . .यहां शिमला में बड़े अच्छे बोर्डिंग हैं वहां पढ़ेगा", वह हंसकर बोला।

"तुमने राजा साहब से बात कर ली है।"

"अब्बा जान से. . .हां. . .क्यों नहीं. .कहते हैं इट्स योर लाइफ़. . .जो ठीक समझते हो करो. . .उन्होंने खुद चार शादियां की थी यार. . .और पता नहीं कितने 'अफेयर्स`।" वह हंसकर बोला।

कुछ देर हम ख़ामोश रहे। मेरी ये समझ में नहीं आ रहा था कि वह जो कुछ करने जा रहा है, सही है या ग़लत।

"यार अहमद कु छ समझ में नहीं आ रहा है।"

"समझने की कोशिश ही क्यों करते हो? लो और पियो", वह हंसकर बोला।

मैं पीने लगा। उसने सिगरेट सुलगा ली और पूछा- "तुम्हारा क्या चल रहा है?"

"यार ऑफिस में एक लड़की है।"

"अरे बेटे. . .मैंने ये तो नहीं पूछा था कि ऑफिस में कोई लड़की है या नहीं है. . .कुछ चल रहा है?" वह जोर देकर बोला।

"कहने की हिम्मत नहीं पड़ती।"

"अबे तेरा वही हाल है. . .फौज़ी से कहने में तूने एक सदी लगा दी थी।"

"हां यार", मैं उदास हो गया।

"उसे खाने पर बुलाया?"

"खाने पर?"

"हां. . .भेजा खाने पर नहीं, खाना खाने पर।"

"नहीं यार. . ."

"तुम मुझको मिलवा दो उससे।"

"बिल्कुल नहीं। हरगिज़ नहीं. . .कभी नहीं।" मैंने कहा और वह हंसने लगा- "शेर को भेड़ से मिलवा दूं?"

सुबह अहमद के कमरे के दरवाज़े की 'कालबेल` बजी तो मैंने उठकर दरवाजा खोला। सामने शकील खड़ा है। चेहरे पर प्यारी-सी मुस्कुराहट के अलावा सब कुछ बदला हुआ था। हम दोनों गले मिले।

अहमद ने बाथरूम से निकलकर शकील को देखा तो जोर का नारा मारा ये मारा पापड़ वाले को` और दौड़कर लिपट गया।

'पर बेटा तुमने ये अपनी हुलिया क्या बना रखी है। पूरे नेता लगते हो।` अहमद ने पूछा।

शकील सफेद रॉ सिल्क का शानदार कुर्ता और खड़खड़ाता हुआ खादी का पजामा पहने था। एक हल्के कत्थई रंग की बास्कट की जेब में महंगा कलम, डायरी साफ नज़र आ रहे थे। एक हाथ में वी.आई.पी. का सूटकेस था। ओमेगा घड़ी बंधी थी। आंखों पर सुनहरे फ्रेम का चश्मा था। एक हाथ में पान पराग का डिब्बा दबा था। चेहरा कुछ भर गया था और खास बात ये कि एक अच्छी तरह कटी-कटाई फ्रेंचकट दाढ़ी नमूदार हो गयी थी।

'ये तो यार. . .जानते हो न जिला की युवा कांग्रेस का अध्यक्ष हो गया हूं।` वह कुछ मज़ाक में कुछ गंभीरता से बोला।

'अबे साले तो उसके लिए नयी हुलिया बना ली है।`

'यार तुम लोग समझते नहीं। इसी हुलिये से तो वहां रोब पड़ता है, शहर में लोग सलाम करते हैं। अफसर इज्जत करते हैं. . .चार काम निकलते हैं।`

'सुना साले तुमने शादी कर ली और हम लोगों को बुलाया भी नहीं।` अहमद ने कहा।

'यार बस बड़ी हबड़-तबड़ में हो गयी। घर वाले चाहते नहीं थे कि हाजी करामत अंसारी के यहां मेरी शादी हो।`

'क्यों?`

'यार तुम लोग तो जानते ही हो. . .मेरे भाई और अब्बा ने मुझे जायदाद में हिस्सा देने और दुकान की आमदनी से बाहर कर दिया था। दो सौ रुपये महीने दे देते थे और पड़ा सड़ रहा था तो राजनीति में आ गया। कुछ दबने लगे। उसके बाद मैंने खुद भी हाजी करामत अंसारी के यहां बातचीत चलवाई. . .हाजी साहब इलाके के बाअसर आदमी हैं मेरे वालिद को लगा कि अगर मेरी वहां शादी हो जाती तो किसी तरह मुझे दबा न सकेंगे. . .वो लोग तो बरात में गये भी नहीं थे।`

'खैर अब सुनाओ कैसी कट रही है`, अहमद ने पूछा।

'मस्ती है।`

'करते क्या हो?`

'यार नेता हूं. . .वही करता हूं जो नेता करते हैं।` वह मज़ाक में बोला।

'मतलब?`

'नेपाल से लकड़ी मंगवाता हूं. . .`

'और लकड़ी के साथ-साथ लड़की ?` मैंने पूछा।

शकील हंसने लगा।

अहमद ओमेगा घड़ी देखकर बोला, 'लगता है पैसा तो पीट रहे हो।`

'नहीं यार ये घड़ी तो शादी में मिली थी।`

'बीबी कैसी है?`

'बस यार जैसी होती हैं।`

'तो बेटा तुमने उसी तरह शादी की है जैसे अकबर द ग्रेट ने की थी।` अहमद ने कहा और हम सब हंसने लगे।

अकबर होटल में नाश्ता करने के बाद कनाट प्लेस आ गये। इन दोनों में अपनी-अपनी प्रेमिकाओं या पत्नियों के लिए कुछ खरीदना था। चाय वाय पीते शकील से बातें होती रहीं. . .ज़मीन खरीदकर डाल दी है. . .सोचा है कभी कॉलोनी कटवा दूंगा. . .बगैर पॉलीटिक्स के पैसा नहीं आता और बिना पैसे के पॉलीटिक्स नहीं होती. . .एम.पी. का टिकट चाहिए तो चार एम.एल.ए. के उम्मीदवारों को पैसा देना है. . .पार्टी जो देती है, नहीं देती है उससे कोई मतलब नहीं है. . .अपना एक सर्किल तो बनाना ही पड़ता है. . .जिसमें सभी होते हैं. . .दाढ़ी न रखूं तो लोग मुसलमान नहीं मानेंगे. . .मुसलमान न माना तो गयी पॉलीटिक्स. . .अब तो ये है कि कितने वोट हैं आपके पास? मैंने शहर ही नहीं ज़िले की मस्जिदों का एक 'नेटवर्क` बना दिया है. . .मदरसे उन्हीं में शामिल हैं।

"तो मतलब तुम्हारे ऐश हैं।"

"पीते-पिलाते हो कि छोड़ दी।"

"यार अब बड़ा डर हो गया है।"

"अबे यहां दिल्ली में कौन देखेगा।"

"हां दिल्ली की बात तो ठीक है. . .है क्या शाम का प्रोग्राम?"

"अबे यहां तो रोज़ ही होता है. . .आज तुझे नहला देंगे", अहमद ने कहा।

रतजगा रही। रात भर पीना-पिलाना और गप्प-शप्प चलती रही। अहमद लंदन की कहानियां सुनाता रहा। शकील ने कहा कि अगली गर्मियों में लंदन ज़रूर जायेगा।

"ये तो साला 'नक्सलाइट` हो गया है", अहमद ने शकील को मेरे बारे में बताया।

"यार तुम भी साजिद. . ."हे वही के वही", शकील ने दुख भरे लहजे में कहा।

"क्यों बे? इसमें क्या बुरी बात है", मुझे गुस्सा आ गया।

"यार गुस्सा न करो. .. इस तरह की पॉलीटिक्स इंडिया में कभी चलेगी नहीं", वह बोला।

"क्यों?"

"देख लेना. . .तुम लोग किताबें पढ़ते हो. . .मैं ज़िंदगी देखता हूं समझे?"

"बड़े काबिल हो गये हो सालेर, अहमद ने कहा।

"देखो, एक बात सुन लो. . .हम लोगों की छोड़कर कोई पार्टी, कोई भी पार्टी ऐसी नहीं है जो गरीब को गरीबी से आज़ाद करना चाहती है। अगर कुछ पार्टियों की ऐसी इच्छा भी है तो उनके पास कोई प्रोग्राम नहीं है, रणनीति नहीं है. . .हम लोग मानते हैं कि राजसत्ता का जन्म बंदूक की नोक से होता है. . .गरीब आदमी के पास ताकत आयेगी तो सत्ता आयेगी. . .सत्ता आयेगी तो उसका भला होगा. .. र, मैंने कहा।

"अरे गरीब अपना भला करना चाहें तब तो कोई आगे आये न? हमारे गरीब तो गरीबी में ही खुश हैं।"

"ये चालाक सत्ताधरियों का प्रोपगेण्डा है. . .समझे? कौन चाहता है भूखा मरना है? किसे पंसद आयेगा कि दवा और इलाज के अभाव में मर जायेगा? कौन अपने बच्चों को पढ़वाना नहीं चाहता?

"लेकिन यार तुम जंगलों में 'आर्म्स स्ट्रगल` करने न चला जाना", अहमद बोला।

"वक्त आयेगा तो वह भी करना पड़ेगा. . .बात सिर्फ इतनी है कि मैं इस 'सिस्टम` से नफ़रत करता हूं और किसी भी क़ीमत पर इसको बदलना चाहता हूं. . .किसी भी क़ीमत पर, चाहे उसमें मेरी जान ही क्यों न चली जाये।"

"यार हो गये हो बड़े पक्के", अहमद बोला।

"चलो यार मान लिया जो कह रहे हो सच है. . .हम कांग्रेसी किसी से बहस नहीं करते।" शकील बोला।

"हां तुम लोग तो लोकतंत्र के जोड़-तोड़ में माहिर हो गये हो . . .बहस क्यों करोगे", मैंने कहा।

रात में तीन बजे हम दोनों भी अहमद के कमरे में ही पसर गये। इतनी रात गये कौन कहां जाता?

साढ़े नौ बजे काफी हाउस से लोग उठने लगते हैं लेकिन हमारी मण्डली जमी रहती है। लगता है कि करने के लिए इतनी बातें हैं कि समय हमसे मात खा जायेगा। दस बजे जब काफी हाउस के बैरे हम लोगों से तंग आकर बत्तियां बुझाने लगते हैं तो हम उठते हैं और मोहन सिंह प्लेस में ही पंडित जी के कैफे में बैठ जाते हैं। यहां ग्यारह बजे तक बैठ सकते हैं। उसके बाद पंडित को जम्हाइयां आने लगती हैं और छोटू तो खड़े-खड़े सोने लगता है। इस दोनों पर हम में से किसी को तरस आता है और हम उठ जाते हैं। बाहर सड़क की दूसरी तरफ वाला ढ़ाबा बारह बजे तक खुलता है। एक-आद चाय वहां पीने के बाद अपनी-अपनी तरफ जाने वाली आखिरी बसों के लिए डबल मार्च शुरू हो जाती है जो कभी-कभी दौड़ने जैसी भी लगने लगती है।

रावत को रीगल के स्टाप पर छोड़कर मैं अपने स्टाप की तरफ जाने लगा तो रावत ने कहा, "यार साजिद तुम मेरे घर चलो. . .आराम से बातें करेंगे।"

बली सिंह रावत हमारे ग्रुप में नया है। अभी छः सात महीने ही बंबई से आया है। वह नैनीताल से शाह जी का पत्र नवीन जोशी के नाम लाया था। नवीन ने उससे मेरा

परिचय कराते हुए कहा था, "तुम दोनों एक ही संस्था में काम करते हो रावत 'दैनिक राष्ट्र` में सब-एडीटर हैं।"

इसके बाद ऑफिस में जब कभी मौका मिलता हम लोग साथ-साथ कैंटीन में लंच करने लगे। रावत ने खुद ही बताया था कि उसका ताल्लुक भोटिया जन-जाति से है जो भारत और तिब्बत की सीमा पर रहती है। किसी ज़माने में ये लोग तिब्बत के साथ व्यापार करते थे लेकिन अब वह बंद हो गया है और मोटिया जानवर पालकर गुजर-बसर करते हैं। उसने बताया था कि वह अपनी बिरादरी का पहला आदमी है जिसने बी.ए. पास किया है और इतनी बड़ी नौकरी यानी बंबई में 'दैनिक राष्ट्र` की प्रूफरीडरी की है। वह इन बातों पर हँसता था। उसके अंदर शर्म, ग्लानि या अपमानित महसूस होने का भाव नहीं होता था। कहता था जब मेरी मां ने कहा कि मेरी शादी करना चाहती है तो बिरादरी ने शादी लायक सभी लड़कियों को उसके सामने खड़ा कर दिया था और कहा था जिसे चाहो चुन लो। उसे यह बताते हुए संकोच नहीं होता था कि वह मेहनत मजदूरी करके पढ़ा है। शाह लोगों के छोटे-मोटे काम किए हैं। बंबई में ठेला खींचा है।

मैं उसके साथ उसके घर पहुंचा तो बारह बज चुके थे। उसकी पत्नी ने दरवाज़ा खोला। उसे देखकर लगा कि वह सो रही थी। रावत ने उससे मेरा परिचय कराया और कहा कि खाना पकाओ, ये हमारे साथ खाना खायेंगे। मेरे बहुत मना करने के बाद भी रावत इस बात पर अड़ा रहा और कमरे से जुडे किचन में उसकी पत्नी को खाना पकाने में जुट जाना पड़ा।

हम हाथ मुंह धोकर बैठे तो रावत बोला, "देखो मैं जो कुछ हो गया उसकी कल्पना भी नहीं कर सकता था. . .ये बात तो मैंने कभी सोची ही नहीं थी कि मैं 'दैनिक राष्ट्र` में उप-संपादक हो जाऊंगा और अब मैं. . ." वह रुका, फिर बोला, "जानते ही हो मैं फिल्म समीक्षक हूं। कला पर लिखता हूं। मैं तो नहीं कहता कि मेरा लिखा 'ग्रेट` है लेकिन किसी से कम भी नहीं है।"

मैंने इधर-उधर देखा। एक बड़ा-सा कमरा, पीछे बरामदा। कमरे के एक कोने पर बड़े से बेड पर उसके दो बच्चे सो रहे हैं। दूसरे कोने पर लिखने की मेज के साथ एक तख़्त रखा है जिस पर शायद वह सोता है। दीवारों पर कैलेण्डर और कुछ कलात्मक फिल्मों के पोस्टर लगे हैं।

"मैं आज जो भी हूं अपनी मां की वजह से हूं। तुम उसे देख लो ये कह ही नहीं सकती कि इस बेपढ़ी लिखी, बिल्कुल गांव वाली महिला में इतनी ताकत होगी। उसके अंदर अपार शक्ति है। अब भी वह दिन में दस मील पैदल चल लेती है। यार वहां कि जिंदगी ही ऐसी है। इतनी कठोर, इतनी निर्मम, इतनी संघर्षशील कि आदमी मेहनत किए बिना रह ही नहीं सकता. . .ये बताओ खाने से पहले कुछ पियोगे? मेरे पास मिलिट्री की रम पड़ी है।"

"नेकी और पूछ पूछ", मैंने कहा।

वह रम की बोतल और गिलास लेकर आया। पत्नी से पानी मंगवाया और कुछ नमकीन बना देने की भी फरमाइश कर दी। हम पीने लगे। धीरे-धीरे कमरे का नाक नक्शा बदलने लगा। रावत बिना पिए ही काफी भावुक ढंग से बोलता है। नशे के बाद उसकी भावुकता और नाटकीय और बढ़ गयी थी। वह हर तरह भंगिमा से अपनी बात प्रमाणिक सि----कर रहा था।

"आज भी तुम वह घर जहां मां रहती है देख लो तो अचंभे में पड़ जाओगे. . .समझ लो इससे थोड़ा बड़ा कमरा. . .कमरा भी क्या है. .कुछ पत्थर लगाकर दीवारें बनी हैं। पिछली दीवार पहाड़ है। लकड़ी के टुकड़े लगाकर दरवाज़ा बंद होता है। इसी में मेरी मां और पच्चीस तीस मेडे रहती हैं।"

"तुम्हारे वालिद गुज़र गये हैं?" मैंने पूछा।

"हां उसे भेड़िये खा गये थे. . .भेड़िये. . .वह इतने जीवट का आदमी था कि जंगली रीछ से लड़ जाता था। एक बार उसने अपने भाले से जंगली रीछ का सामना किया था. . .मां बताती है कि रीछ भाग गया था।"

वह बोल रहा था। उसकी बातों में सच्चाई का ताप था। मुझे लगा रावत अब भी कई मायनों में वही है। उसी इलाके का रहने वाला, सीधा-साधा आदमी जो शहरी हलचल के छल-कपट से दूर है। हमारी शब्दावली में उसे सीध कहा जायेगा जिसके कई अर्थ निकाले जा सकते हैं।

मैं पांच साल का था। मुझ सब याद है। मेरे पिता ने जानवरों के लिए एक बाड़ा बनाया था। रात का समय था। अचानक बाड़ा टूटने की आवाज से पिताजी जाग गये। उन्होंने मां से कहा कि लगता है भेडियों ने बाड़ा तोड़ दिया। इतनी ही देर में भेड़ों के मिमियाने की आवाज़ें आने लगी। कुत्ते बुरी तरह भौंकने लगे। पिताजी लकड़ी के तख़्त हटाकर दरवाज़ा खोलने लगे। मां ने कहा 'बाहर मत जाओ।` पिताजी ने कहा, 'मेरे जीते जी भेड़िये उन्हें खा जायें ?` वे अपना भाला लेकर बाहर निकले, उनके पीछे मां निकली और मां के पीछे मैं निकला। मुझे देखकर पिताजी ने कहा, 'ये कहां आ रहा है। इसे छत पर चढ़ा दे।` मां ने मुझे छत पर उछाल दिया। पिताजी भेडियों से भिड़ गये। लाल लाल आंखें चमक रही थी। भेड़िये पच्चीस-तीस थे। उन्होंने पिताजी पर हमला कर दिया। उनके सामने जो भेड़िया आ जाता था उसे भाले से गोद देते थे लेकिन भेड़िये पीछे से हमला करने में बड़े होशियार होते हैं। मां उन्हें मार रही थी कि पिताजी के पीछे न आ सके। पर भेड़िये एक दो थे नहीं। और फिर उन्हें भेड़ों के रक्त की सुगंध मिल गयी थी। मां ने जब देखा कि भेड़िये भाग नहीं रहे हैं तो अंदर से एक लकड़ी पर कपड़ा जलाकर बाहर आयी और आग से भेड़िये भागने लगे। पर इस बीच पिताजी को भेडियों ने बुरी तरह काट लिया था। वे लेटे हांफ रहे थे। मां कपड़े से खून साफ कर रही थी। पिता ने उससे कहा कि देख मैं नहीं बचूंगा. . .बचते भी कैसे. . .वहां से अस्पताल तक पहुँचने में दो दिन लगते हैं. . .तो पिताजी ने कहा. . .मैं नहीं बचूंगा, मुझे एक वचन दे. . .तू किसी भी तरह इसे पढ़ा देगी. . .मां ने वचन दिया था।"

गरम-गरम पकौड़े आ गये थे लेकिन हम दोनों ने उधर हाथ नहीं बढ़ाया। रावत की आंखों में तो आंसू आ गये थे। वह उन्हें अपने हाथों से पोंछ रहा था। मैं हैरतज़दा बैठा देख रहा था कि मेरे सामने एक ऐसा आदमी बैठा है जिसकी जिंदगी अच्छी से अच्छी कहानी को भी मात देती है। जो मुझे किसी दूसरी दुनिया की बातें लग रही थीं।

"अब जहां हमारा घर था वहां स्कूल कहां? दस मील दूर एक प्राइमरी स्कूल था। घाटी में उतरना पड़ता था और फिर पहाड़ पर चढ़ना पड़ता था। मां रोज मुझे वहां ले जाती थी. . .घाटी में एक पहाड़ी नदी पार करना पड़ती थी. . .वहां से मैंने पाँचवी की थी। हर साल किताब कापी खरीदने के लिए मां को भेडें बेचना पड़ती थी। मैं जानता था कि और कोई रास्ता नहीं है।"

"पकौड़े ठण्डे हो रहे हैं।" उसकी पत्नी ने हमें याद दिलाया।

पाँचवी के बाद गांव के मुखिया के साथ मां मुझे नैनीताल लाई। हम दो दिन चलकर नैनीताल पहुंचे थे। मुखिया बिकरम शाह को जानता था। बात यह तय हुई कि मैं दुकान, मकान की सफाई किया करूंगा और बदले में वहां सो जाया करूंगा. . .माँ हर महीने आया करती थी। अपने साथ खाने-पीने का सामान लाती थी। वैसे मैंने एक साल बाद सिनेमा हाल में गेट कीपरी भी शुरू कर दी थी। वहां से पंद्रह रुपये महीने मिल जाते थे. . .पर खाने-पीने का तो ठीक नहीं था. . .कभी जब एक दो दिन खाने को न मिलता था तो चेहरा निकल आता था। देखकर बिकरम शाह कहते, लगता है, तुझे कुछ मिला नहीं खाने को. . .जा अंदर खा ले।"

हम खाना खाने लगे। उसकी पत्नी गरम-गरम फुलके दे रही थी। मेरा और रावत के बहुत कहने पर भी हमारे साथ खाने पर नहीं बैठी। रावत ने बताया कि अब हमारे खा लेने के बाद ही खायेगी। खाने के बीच खामोशी रही। हां एक-एक सिगरेट सुलगाने के

अंधेरे में उड़ते जुगनू पकड़ने की कोशिश करने लगा। मैं बिल्कुल खामोश था क्योंकि उस वक्त मैं इससे बड़ा और कोई काम नहीं कर सकता था।

"इसी तरह गाड़ी चलती रही। हाई स्कूल किया कुछ नैनीताल की हवा लगी। कालेज में दाखिला लेने के लिए मां ने अपने चांदी के गहने बेचे थे. . .और यार" वह कहते-कहते पहली बार झिझका। लगा कोई ऐसी बात कहने जा रहा है जिसका उसे मलाल है, दुख है।

पर यार उन दिनों मुझे अच्छा नहीं लगता था कि वह मुझसे मिलने आती है. . .यार सब लोग देख कर . . .और फिर वह दो दिन पैदल चलती हुई आती थी। यही नहीं पीठ पर लड़कियों का गट्ठर या भाड़े पर लाये जाने वाला समान भी लाद लेती थी ताकि खाने-पीने के लिए कुछ हो जाये. . .मैंने एक दिन उससे कहा कि वह न आया करे। वह समझदार भी थी मेरे कपड़े लत्ते और मेरे दोस्तों को देखकर समझ गयी थी कि मैं क्यों मना कर रहा हूं। उसने मुझसे कहा कि वह नहीं आयेगी. . .पर यार वह आती थी। मुझे दूर से देखती थी और वापस चली जाती थी।" रावत की आवाज़ बहुत भारी हो गयी और उसके आंसू तेजी से गालों पर ढरने लगे। मैं सटपटा गया।

दो साल बाद घर पहुंचा तो देखा पानी सिर से ऊंचा हो गया है। अम्मां ने भूख हड़ताल कर दी कि जब तक मैं शादी के लिए 'हां` नहीं करूंगा वे खाना नहीं खायेंगी। अब्बा ने तमाम तर्क दिए कि लड़की में क्या बुराई है। बी.ए. किया है। लंदन में पली बढ़ी है। जाना-बूझा खानदान ही नहीं है हमारे दूर के अजीज भी हैं। मिर्जा इब्राहिम की अकेली लड़की है। मिर्जा साहब का बहुत बड़ा कारोबार है। खाला ने भी समझाया कि बेटा माशा अल्लाह से अट्ठाईस के हो गये हो। कब करोगे शादी? क्या हम तुम्हारे सिर पर

सेहरा देखने की हसरत में मर जाएंगे? खालू ने कहा- मियां तुम्हारा 'सेहरा` पिछले दस साल से लिखा पड़ा है। बस लड़की वालों के नाम डालने हैं। अम्मा 'हां` करो तो मैं 'सेहरा` आगे बढ़ाऊं।

अम्मां ने ये भी कहा कि तुम कहीं करना चाहते हो। किसी से इश्क मुहब्बत हो तो बता दो। मैं हंस दिया। ऐसा तो कुछ है नहीं। मैं कई खूबसूरत बहाने बनाकर मामले को टाल दिया। सोचा यार अभी से क्या फंसना शादी-ब्याह के चक्कर में।

शाम चायखाने में हम सब जमा हो गये। उमाशंकर, अतहर, मुख़्तार, कलूट के साथ गप्प-शप्प होने लगी। बातचीत में दिल्ली छाई रही। वे यह जानना चाहते थे कि दिल्ली में क्या हो रहा है। देश के भविष्य को निर्धारित करने वाले क्या कर रहे हैं? मैं इन सवालों के जवाब दे रहा था और सोच रहा था कि पूरे देश को यह बता दिया गया है कि देखो तुम्हारे भविष्य के बारे में फैसला दिल्ली में होता है। और दिल्ली के बारे में इतनी उत्सुकता से जानकारी लेने वाले अपने शहर के प्रति उदासीन हैं। उनका मानना है यहां कुछ नहीं हो सकता। पता नहीं यह कितना सच है लेकिन दस पन्द्रह साल से जो सड़कें खराब है वे आज तक वैसी ही हैं जैसी थीं। बिजली की जो हालत है वह भी वैसी ही है जैसी थी। अस्पताल के सामने जो अराजकता है वह भी कायम है। मरीज़ों की रेलपेल है और डॉक्टर अपनी प्राइवेट प्रैक्टिस करते हैं। अदालतों में भी रिश्वत का बोलबाला है। पुलिस अपना ताण्डव करती रहती है। अधिकारी मौज मस्ती में दिन बिताते हैं लेकिन लोगों को सिर्फ चिंता दिल्ली की है।

शहर में कोई पार्क नहीं है। सड़कें ही नहीं हैं तो फुटपाथ का सवाल नहीं पैदा होता। सड़कों के नाम पर ऊबड़-खाबड़, टूटे, ऐसे चौड़े रास्ते हैं जो कभी सड़कें हुआ करते थे। लायब्रेरी बरसों से बंद पड़ी है और अब बिल्कुल ही गायब हो गयी है। मनोरंजन के लिए दो सिनेमाहॉल हैं जो अपनी खस्ता हालत पर रोते रहते हैं। कूड़ा उठाने वाले

शायद यहां हैं ही नहीं। सड़कों के किनारे कूड़े के अम्बार लगे हैं और लोग वहीं रहते हैं। देखते हैं लेकिन फिर भी नहीं देखते। नगरपालिका के चुनाव बहुत साल से हुए नहीं। जब भी नगरपालिका बनती है इतने झगड़े होते हैं, इतनी मारपीट होती है, इतनी गिरोहबंदी रहती हैं कि कोई काम नहीं हो पाता और कलट्टर उसे भंग कर देता है। ऐसा नहीं है कि ज़िला प्रशासन के पास आकर नगरपालिका में कोई काम होता हो। भ्रष्टाचार सीमाएं पार कर चुका है लेकिन जीवन चल रहा है। लोग रह रहे हैं।

मैं आज के शहर की तुलना अपने बचपन के ज़माने के शहर से करता हूं और यह जानकर आश्चर्य होता है कि उस ज़माने में यानी सन् ५६-५७ के आसपास यह शहर ज्यादा साफ सुथरा था। सड़कें अच्छी थीं। लायब्रेरी खुलती थी और लोग वहां जाकर पढ़ते थे। शहर में सफाई थी। गर्मियों के दिनों में एक भैंसा गाड़ी सड़कों पर छिड़काव भी करती थी। आबादी कम थी और बिजली पानी की "आधुनिक सुविधाएं न होने के बावजूद जीवन आरामदेह और अच्छा था।

आज़ादी के बाद ऐसा क्या हो गया है कि सब कुछ खराब हो गया है। शहर के बाहर जो एक दो कारख़ाने या राइस मिलें खुली थीं सब बंद हो गयी हैं। मज़दूरी के नाम पर रिक्शा चलाने के अलावा और कोई काम नहीं है।

सुबह नाश्ते पर पता चला कि सल्लो को टी.वी. हो गयी है और वह कानपुर में हैलट अस्पताल में भर्ती है। इस ख़बर पर मैं सबके सामने क्या प्रतिक्रिया दे सकता था। खामोश रहा और अफसोस का इज़्हार कर दिया लेकिन बुआ से ये पूछना नहीं भूला कि सल्लो किस वार्ड किस बेड पर है।

दोपहर का खाना खाकर ऊपर कमरे में लेटा तो सल्लो की याद अपने आप आ गयी। यह तय किया कि कानपुर में उसे देखता हुआ ही दिल्ली वापस जाऊंगा। पन्द्रह मिनट तक मैं हैलेट अस्पताल के गलियारों और वार्डों का चक्कर लगाता रहा। लोग और मरीज़ वार्ड के बेडों पर ही नहीं, फर्श पर गलियारों में, सीढ़ियों पर, पेड़ों के नीचे, दीवार के साये में, कूड़े के ढेर के पास पसरे पड़े थे। सब साधारण ग़रीब लोग. . .सब मजबूर और बेसहारा लोग. . .यार लोग कुछ कहते क्यों नहीं? यह सरकारी अस्पताल है। इसे सरकार ठीक से चलाती क्यों नहीं? ये अस्पताल कभी चुनाव का मुद्दा क्यों नहीं बनता? और ये अकेला अस्पताल इस हालत में न होगा, बल्कि इस तरह के सैंकड़ों अस्पताल होंगे. . .चीख़, पुकार, रोना, गिड़गिड़ाना, कराहना और दीगर आवाज़ों के बीच आखिऱ वार्ड की गैलरी के एक कोने में मैंने सल्लो और उसकी मां को पहचान लिया। लोग गैलरी में से आ जा रहे थे। ट्रालियां, मरीज़ों के स्ट्रेचरों के लोहे के पुराने पहियों से आवाजें आ रही थीं। लोगों के पैरों की धूल उड़ रही थी और उसी गैलरी के एक कोने में सल्लो दरी पर लेटी थी और उसकी मां उसे पंखा झल रही थी। यह देखकर मैं गुस्से से पागल हो गया।

उन्होंने मुझे पहचान लिया। मैं सोच नहीं सकता था कि सल्लो की यह हालत होगी। उसका सिर बांस के ढांचे जैसा लग रहा था जिस पर

झिल्ली चढ़ा दी गयी हो। गालों की हड्डियां उभरकर ऊपर आ गयी थीं। आंखें अंदर धंस गयी थीं। ठोढ़ी बाहर को निकल आयी थी और गर्दन सूखकर बांस जैसी हो गयी थी। उसके हाथ पैर जैसे निचोड़ दिये गये थे। हाथों की नीली रगें बहुत नुमाया हो गयी थीं। उसने मुझे देखा और चेहरे पर एक मुस्कुराहट आई जिसकी व्याख्या असंभव है। उसकी मां खड़ी हो गयी थी।

"ये यहां क्यों पड़ी है?"

"भइया बेड़वा नहीं मिला।" वह लाचारी से बोली।

"ठहर जाओ. .. अभी मिल जायेगा. . .यही रहना मैं अभी आता हूं।"

हॉस्पिटल सुपरेण्टेंडेंट के कमरे के बाहर बैठे चपरासी ने मुझे रुकने का इशारा किया लेकिन मैं इतना गुस्सा में था कि उसे एक घुड़की देकर कमरे में चला गया। सामने मोटा-ताजा, लाल-लाल फूले गालों वाला एक चिकना चुपड़ा आदमी बैठा था। मैंने उसके सामने अपना विज़िटिंग कार्ड रख दिया। मेरी तरफ देखकर उसने विजिटिंग कार्ड पढ़ा, एस. एस. अली, सीनियर रिपोर्टर, 'द नेशन` दिल्ली, वह उठकर खड़ा हो गया। उसके चेहरे से अफराना रोब झड़ चुका था।

"बैठिये सर बैठिये।"

"मैं बैठूंगा नहीं. . .मेरा एक पेशेन्ट आपके वार्ड की गैलरी में पड़ा है उसे "फौरन बेड दीजिए", मैं गुस्से से बोला।

"कहा कहां सर. . .वार्ड नंबर सर. . ." वह खड़ा होकर किसी का नाम लेकर चिल्लाने लगा।

सल्लो को बेड पर लिटा दिया गया। बेड के पास दो कुर्सियां रख दी गयीं। डॉक्टर ने सल्लो के रिकार्ड चार्ट पर मोटे अक्षरों में कुछ लिखा और पूरे आश्वासन देकर चला गया।

मैं कुर्सी पर बैठ गया। सल्लो की सांस तेज़-तेज़ चल रही थी। वह लगातार मुझे देखे जा रही थी।

"ये सब हुआ कैसे?" मैंने उसकी मां से पूछा।

"क्या बतायें भइया. . .शादी के सालभर बाद लड़की हो गयी . . .फिर दूसरे साल भी विलादत हुई. . .लड़का हुआ. . .जो तीन महीने बाद जाता रहा. . .फिर हमल ठहर गया. . .अब भइया खाने का ठीक है नहीं. . .रहने की जगह नहीं. . .रिक्सा वाले की आमदनी. . .सास-ससुर ऊपर से. .. पहले तो काली खांसी हुई. . .फिर बुखार रहने लगा. . .बलग़म में खून आने लगा तो मोहल्ले के हकीम जी को दिखाया . . .सालभर उनका इलाज चलाता रहा. . ."

"मालूम था आप आयेंगे।" सल्लो की पतली कमज़ोर आवाज़ से मैं चौंक गया। वह अपनी मां के सामने कह रही है कि उसे यकीन था कि मैं आऊंगा. . .शायद अब छिपाने के लिए कुछ बचा नहीं है।

"हां. . .मुझे देर से पता चला. . .अभी घर गया था तो मालूम हुआ कि तुम यहां. . ."

सल्लो की कनपटियों की हड्डियां उभर आई हैं और बाल छितरा गये हैं। उसने चादर के नीचे से अपना सूखा और कमज़ोर हाथ निकाला और अपने सीने पर रख लिया. . .यह वही सल्लो है जिसका शरीर चांदनी रातों में कुंदन की तरह दमक जाता था. . .।

"देर कर दी आपने. . .", वह धीरे से बोली।

फ्चुप रह क्या कह रही है", उसकी मां ने उसे डांटा. . .मैं जैसे अंदर तक कट गया। हां देर. . .बहुत देर. . .इतना तो हो ही सकता था कि मैं दिल्ली जाने के बाद उसकी ख़बर लेता रहता था थोड़ा बहुत पैसा भेजता रहता। तब शायद ऐसा न होता. . .हां ये तो अपराधिक देर की है मैंने।

"पहले आ जाते तो. . .", वह अटक-अटक कर बोलना चाहती थी और उसे यह डर नहीं था कि उसकी मां यहीं बैठी है। मैंने स्थिति को थोड़ा सहज बनाने और सल्लो से कुछ कहने का अवसर निकालने के लिए उसकी अम्मां से कहा "जूस पिलाने को मना नहीं किया है न? जाओ जाकर जूस ले आओ।" मैंने पचास का नोट उसकी तरफ बढ़ाया और वह उठ गयी।

उसने अपना हाथ मेरी तरफ बढ़ाया। ठण्डा बिल्कुल निर्जीव और सूखा हाथ. . .लकड़ी की तरह सूखी और खड़ी उंगलियां. . .मैंने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। उसकी आंखों से आंसू निकलने लगे। मैं भी अपने को रोक नहीं पाया।

"अब तो कभी-कभी आते रहेंगे न?"

"हां।"

"देखिए?" वह अविश्वास से मुस्कुराई।

मां के आ जाने के बाद भी वह मेरा हाथ पकड़े रही। मां ने यह देखकर कहा "आप लोगों को बहुत मानती है भइया. . .जब तब आप सबकी बात करती रहती है।"

शाम होते-होते मैं वहां से उठा। सल्लो की मां को एक हज़ार रुपए दिये। अपना फोन नंबर दिया, पता दिया। यह भी कहा कि सल्लो ठीक हो जायेगी तो उसके आदमी को मैं दिल्ली में कोई अच्छी नौकरी दिला दूंगा।

लेकिन मुझे नहीं मालूम था कि यह सल्लो से आखिरी मुलाकात होगी। मुझे अब्बा के ख़त से पता चला कि मेरे अस्पताल जाने के कुछ ही दिन बाद वह गुज़र गयी।

मेरा सिर ज़िंदगीभर के लिए मेरे सीने पर एक काला धब्बा पड़ गया।

उन दिनों काफी हाउस में सन्नाटा काफी रहा करता था। मैं सात बजे पहुंचा था क्योंकि अख़बार के दफ्तर में कुछ काम ही नहीं बचा था। हसन साहब लंबी छुट्टी पर चले गये थे। अखबार के समझदार और ऊंचे पदों पर आसीन लोग हवा का रुख समझ गये थे और वही छपता जो छपना चाहिए। कोई नहीं चाहता था कि नौकरी से निकाल दिया जाये और जेल की हवा खाये। अब ये सब बातें, बातें ही नहीं रह गयी थीं क्योंकि कुछ बड़े-बड़े सम्पादक जेल की हवा खा रहे थे।

एक मेज पर नवीन जोशी अकेला बैठा 'ईव्यनिंग-न्यूज़` का पज़ल भर रहा था। मुझे देखते ही उसके चेहरे पर एक फीकी सी मुस्कुराहट आ गयी।

"आज जल्दी कैसे आ गये?"

"क्या करता। काम है नहीं और सात बजे कमरे जा नहीं सकता।"

"और सुनाओ।"

"वैसे तो सब चल ही रहा है. . .खबर ये है कि जार्ज मैथ्यू अरेस्ट हो गये हैं।"

फ्धीरे से बोलो यार. . .और सुनो. . .ये सब बातें. . ." वह फिक्रमंद निगाहों से देखने लगा।

"अब इतना मत डरो यार।"

"तुम जानते नहीं. . .ज़रा से शक पर लोग पकड़े जा रहे हैं।"

"हां वो तो होगा ही।"

"अमरेश जी और सरयू से मिलने कोई जेल गया था?"

"मुझे नहीं मालूम. . .इतना सुना है कि सरयू को अमृतसर में रखा है. . .अमरेश जी तो दिल्ली में ही हैं।"

"जार्ज मैथ्यू को कहां पकड़ा" वह फुसफुसाकर बोला।

"पटना में।"

"अमित का तुमने सुना?"

"क्या?"

"वह तो कहते हैं कनाडा चला गया।"

"क्या? कनाडा?"

"हां कहते हैं. . .माफी मांग ली. . .उसके कोई रिश्तेदार किसी बड़े ओहदे पर हैं. . .उन्होंने भिजवा दिया।"

"यार अमित तो शायद स्टेट सेक्रेटरी था।"

"अब ये तुम जानो. . .तुम भी तो उन्हीं लोगों के साथ थे।"

"नहीं. . .नहीं यार. . .मैं किसी के साथ नहीं था. . .उठता बैठता सबके साथ था।" नवीन घबरा कर बोला।

"अब बताओ कि सरयू से कैसे मिला जाये?"

"देखो. . ."

वह कुछ कहने जा ही रहा था कि रावत आ गया। उसका भी चेहरा उतरा हुआ था। वह आते ही रहस्यमय ढंग से बैठ गया। मेज पर झुका और फुसफुसाने वाले अंदाज में बोला, "राजनीति पर कोई बात नहीं होगी।"

हम दोनों ने उसके इस अंदाज पर उसे ध्यान से देखा। वह सीधा बैठता हुआ ज़ोर से बोला, "यार साजिद कमाल है, ट्रेनें समय पर आ रही है। आज स्टेशन गया था क्या सफाई है. . .वाह यार वाह।"

हम जानते थे कि वह यह सब हमारे लिए नहीं बोल रहा है। उसे डर है कि शायद. . .शायद. . .या मान रहा है कि दीवारों के भी कान होते हैं।

"यहां कोई नहीं रावत. . .यार ठीक से बात कर।" नवीन ने उससे कहा।

वह धीरे-धीरे बोलने लगा, "मेरे दो बच्चे हैं, पत्नी है। मेरे अलावा उनका कोई देखने सुनने वाला नहीं है. . .तुम सबके तो चाचा, मामा पता नहीं क्या-क्या हैं। घर है। जायदाद है। मेरा कुछ नहीं है। तीन महीने वेतन न मिले तो मेरा परिवार भूखा मर जायेगा।" वह रुका नहीं धीरे-धीरे इसी तरह की बातें बोलता चला गया। हम दोनों सुनते रहे। वैसे भी हमारे पास बोलने के लिए कुछ ज्यादा नहीं था।

मेरे ऊपर हैरत का पहाड़ टूट पड़ा जब मैंने काफी हाउस में अपनी मेज़ की तरफ शकील अंसारी को आते देखा। वह पूरी तरह खादी में लैस था। टोपी भी लगा रखी थी। तोंद का साइज़ बढ़ गया था। उसके साथ दो-तीन और लोग थे जो उसके लगुए-भफगुए जैसे लग रहे थे। उसका व्यक्तित्व शानदार हो गया था। उसे देख कर रावत तो सकते में आ गया। नवीन के चेहरे पर भी घबराहट आ गयी।

"अरे भाई मैं तुम्हारे ऑफिस गया था। वहां पता चला कि तुम काफी हाउस गये हो. . .तो तुम्हें तलाश करता आ गया।" शकील बोला।

मैंने सोचा सबसे पहले रावत को राहत दी जाये। मैंने कहा, "ये शकील अंसारी साहब हैं। मेरे अलीगढ़ के जमाने के बहुत पुराने और प्यारे दोस्त . . .आजकल अपने जिले की युवा. . ."

शकील बात काटकर बोला, "नहीं नहीं अब मैं प्रदेश युवा कांग्रेस का महामंत्री हूं. . .और जिला इकाई का अध्यक्ष हूं. . .इसके अलावा राष्ट्रीय युवक कांग्रेस की कार्यकारिणी का सदस्य हूं।"

"पिछले चार पांच साल में बड़ी तरक्की की. . ."

"नहीं नहीं. . .ये तो अभी की बात है. . .पार्टी ने युवा शक्ति को पहचान लिया है।" वह हंसकर बोला।

"इन लोगों से मिलो नवीन जोशी और वली सिंह रावत. . .मेरे दोस्त।"

शकील ने कुछ खास ध्यान नहीं दिया। अपने साथ आये एक आदमी से कहा, "करीम तुम इन लोगों को लेकर पार्टी ऑफिस जाओ . . .वहीं रहने खाने की व्यवस्था है. . .और कल स्टेशन पर मिलना. . ." फिर मुझसे बोला, प्रदर्शन में पांच सौ लोगों को लेकर आया था। उसने पांच सौ पर विशेष जोर दिया। मैंने महसूस किया कि वह अच्छी हिंदी बोलने लगा है।

"तो चलो कमरे चलते हैं।" उसके लोगों के चले जाने के बाद मैंने शकील से कहा।

"नहीं भाई. . .यू.पी. निवास चलो. . .मैं वहीं ठहरा हूं. . .आराम से बातचीत होगी।

यू.पी. निवास के कमरे में अपनी टोपी-वोपी उतारने के बाद वह कुछ नार्मल हो गया और बोला, "यार रैली में जान निकल गयी।"

"अब इतना भी करोगे न पार्टी के लिए?"

"वो तो सब ठीक है यार. . .ये बताओ क्या मंगवाऊं. . .विस्की ठीक रहेगी या कुछ और।"

"विस्की मंगा लो. . .और खाना करीम से मंगवाना. . .ये साला यहां का रद्दी खाना नहीं खाऊंगा।"

"हां. . .हां. . .क्यों नहीं।" वह हंसा।

कुछ देर बाद महफिल जम गयी। अचानक शकील को ख़्याल आया कि अहमद को लंदन फोन किया जाये। उसने काल बुक करा दी

और हम बैठ गये नयी-पुरानी यादों के साथ। शकील ने बताया कि माहौल कुछ अच्छा है। बड़ा अच्छा काम हो रहा है। मैंने विरोध किया। वह जानता है कि मैं विरोध ही करूंगा और हमारे बीच यह भी तय है कि दोस्ती के बीच और कुछ नहीं आयेगा।

लंदन फोन मिल गया। अहमद से बात करके मज़ा आ गया। वह बहुत खुश हो गया था और उसने हम दोनों को फिर लंदन आने का न्यौता दिया जिसे शकील ने क़बूल कर लिया।

"चलो यार गर्मियों में लंदन चलते हैं।" उसने मुझसे कहा।

"पैसा?"

"उसकी तुम फिक्र न करो. . .मैं दूंगा. . .पूरा खर्च।"

"लेकिन क्या मैं तुमसे लूंगा।"

"अब यही तुम्हारा चुतियापा है।" वह हंसने लगा।

मैं रात में दस ग्यारह बजे जब भी कमरे पर लौटकर आता तो कपड़े अलगनी पर सूखते मिलते, कमरे में सफाई नज़र आती, किचन में दूध उबला रखा होता, खाना गर्म मिलता।

पास वाले घर में बशीर को पता नहीं कैसे पता चल जाता था कि मैं आ गया हूं। वह सीध मेरे पास चला आता और जो भी चाहिए उसका इंतिज़ाम कर देता। हर सवाल के जवाब में बताता कि यह आपा ने किया, वो आपा ने किया है। आपा कह रही थीं वो ये भी कर सकती है, वो भी कर सकती है। जाड़े आ रहे हैं आपा रज़ाई गद्दे बना देगी। गर्मियां आ रही है आपा मच्छरदानी ले आयेंगी। आपा ने आपके लिए अचार डाला है। आपा आपके लिए आंवले का मुरब्बा बना रही हैं।

शुरू शुरू में तो पता नहीं शायद ये कुछ अच्छा लगता होगा लेकिन बाद में एक बोझ लगने लगा। यह भी अंदाज़ा लगाया कि आपा बहुत आगे की सोच रही हैं।

आज खाना लेकर बशीर नहीं बल्कि आपा खुद आ गयीं। आपा को पहली बार देखा। आपा ने खूब तेल लगाकर दो चोटियाँ की हुई थीं। उनको देखकर पता नहीं क्यों मेरे आग लग गयी। अपने हिसाब से उन्होंने बेहतरीन कपड़े पहने थे जो हिंदी की मुस्लिम सोशल फिल्मों में नायिकाएँ पहना करती थीं लेकिन इन कपड़ों के लिए जिस सुंदर और सुडौल जिस्म की जरूरत होती है वह नदारद था। चेहरे पर पाउडर थोपा हुआ था और होठों पर लाल लिपिस्टिक के कई लेप लगाये थे।

मैंने सोचा ये लड़की मुझसे शादी करना चाहती है। इसके वालिद कर्ज मांगते रहते हैं। भाई भी फ़रमाइशें किया करता है। कौन है ये लोग और इसका इन्हें क्या हक है? लेकिन ये लड़की केस बना रही है।

वह खाना रखकर चली गयी। मैंने बैठने के लिए नहीं कहा। खाना खाया तो बरतन लेने बशीर आया। मैंने सिगरेट का धुआं छोड़ते हुए उससे कहा, "सोचता हूं ये मकान छोड़ दूं. . .ऑफिस से दूर पड़ता है।" बशीर ने हैरत में मेरी तरफ देखा और बरतन लेकर चला गया। थोड़ी देर बाद आया और बोला, "आपा कह रही हैं देखेंगे कैसे छोड़ते हैं ये मकान।"

मैं सन्नाटे में आ गया। मतलब साफ था। मेरे मकान छोड़ने से पहले आपा ये शोर मचा देंगी कि मैंने शादी का वायदा करके उसके साथ जिस्मानी रिश्ता बना लिया है या मैंने आपा के साथ बलात्कार किया है। चाहे कुछ हुआ या नहीं लेकिन एक सीन क्रिएट हो जायेगा। मैं फंस भी सकता हूं। इसलिए कुछ होशियारी से काम लेने की जरूरत है। मैंने बशीर से कहा "अभी तय थोड़ी है मकान छोड़ना. . .देखो क्या होता है।"

अगले दिन काफी हाउस में इस मसले पर मीटिंग बैठ गयी। रावत, नवीन जोशी, मोहसिन टेढ़े के अलावा निगम साहब भी थे। सबने राय दी कि भागो. . .जितनी जल्दी हो सकता है भागो। लेकिन कैसे तरह-तरह की रणनीतियां बनने लगीं। आखिरकार तय पाया कि मैं पहले मकान मालिक को हिसाब चुका दूं उसके बाद रात बारह बजे के बाद अपना सामान समेटूं। साढ़े बारह बजे निगम साहब अपनी गाड़ी मेन रोड पर खड़े होंगे। मोहसिन टेढ़े उसके साथ होगा। मैं गाड़ी में सामान रखूंगा और सीधे मोहसिन टेढ़े के साथ मस्जिद वाले कमरे में आ जाऊंगा। उसके बाद कहीं शरीफों के मोहल्ले में बरसाती वग़ैरा देख ली जायेगी।

इस आड़े वक्त निगम साहब ने जो मदद ऑफर की उससे मैं प्रभावित हो गया। निगम साहब की एडवरटाइज़िंग एजेंसी है। कुछ मकान हैं जो किराये पर उठा रखे हैं। उम्र हम लोगों से पांच-सात साल ज्यादा ही होगी। कुछ पॉलीटिक्स में भी दखल है। ऊंचे-ऊंचे लोगों को जानते हैं। हमारे लिए कवि हैं। अपनी तरह की कविताएं लिखते हैं जिनका उनके पीछे अच्छा खासा मज़ाक उड़ता है। जवानी में निगम साहब को पहलवानी का शौक था। यही वजह है कि अब पूरा जिस्म अजीब तरीके से फूला हुआ-सा लगता है। चेहरे पर छितरी हुई दाढ़ी और सूखे बाल कवि होने की गवाही देते हैं।

घर वालों को टालते-टालते कई साल हो गए थे और अब ये लगने लगा कि ज्यादा टाल पाना नामुमकिन है। अम्मा, खाला और खालू दिल्ली आ गये। एजेण्डा यह था कि किसी सूरत मुझे मिर्जा इब्राहिम की लड़की नूर इब्राहिम से शादी पर रजामंद कर लिया जाये। कहा जाता है कि शादी और जायदाद के बारे में जो बहुत चाक चौबंद रहता है, हर-हर तरह से सौदे को देखता परखता है उसे कुछ नहीं हासिल होता। खालू ने सौ मिसालें देकर समझाया कि शादी कितनी जरूरी है। अम्मा खूब रोयीं और खाला

की आंखों में आंसू आ गये। अम्मां ने कहा कि हमारे कहने पर मिर्जा इब्राहिम ने दो साल इंतिज़ार किया है और हम उनसे नहीं नहीं कह सकते। अम्मा ने नूर इब्राहिम का पूरा बायोडेटा याद कर लिया था। जो बार-बार मुझे सुनाया जाता था। नूर इब्राहिम की तस्वीर भी उन्होंने मंगा ली थी। मुझे दिखाई गयी थी। अच्छी खूबसूरत लड़की है, यह कोई तस्वीर देखते ही सकता था। बहरहाल मुझे हां करना पड़ी। मेरी हां होते ही अम्मां ने खालू के साथ जाकर लंदन फोन मिलवाया और इब्राहिम साहब को रिश्ता दे दिया। उसके बाद तो हवा के घोड़े दौड़ने लगे।

मिर्जा इब्राहिम के बारे में जो बताया गया उससे यह अंदाजा हुआ कि वे किसी नाविल का किरदार हो सकते हैं। उनकी उम्र सोलह साल की थी वे घर से भागकर बंबई पहुंच गये। वहां एक मर्चेण्ट शिप में बर्तन धोने का काम मिल गया। यह जहाज जब लंदन पहुंचा तो मिर्जा इब्राहिम लंदन में ही रह गये। यहां छोटे-मोटे काम किए और पता नहीं कैसे लंदन की सबसे बड़ी जौहरी बाज़ार बाण्ड स्ट्रीट की किसी दुकान में नौकरी मिल गयी। यहां जवाहेरात की पहचान भी होने लगी और शाम की क्लासें भी अटैण्ड करने लगे। दो-तीन साल में खुद छोटी-मोटी खरीद करने लगे। इस बीच हिन्दुस्तान आये और हैदराबाद से उन्हें अक़ीक की एक जोड़ी मिली जिसने उनकी किस्मत बना दी। उसी बाज़ार में जहां नौकरी करते थे दुकान खरीद ली। उसके बाद तो मिर्जा साहब आगे ही आगे चले। साउथ अफ्रीका से हीरे लाने लगे। लंदन शेयर मार्केट में खूब पैसा कमाया। रियल स्टेट बिजनेस में आ गये। एक अमरीकी कम्पनी में खूब पैसा लगा दिया जो सऊदी अरब में तेल के मैदान खोज रही थी। इस तरह पैसे से पैसा आता गया। लेकिन मिर्जा इब्राहिम न अपने को भूले और न अपने देश को भूले। यही वजह है कि जब लड़की की शादी का मामला सामने आया तो हिन्दुस्तान में और वह भी बिरादरी में लड़का तलाश करने लगे।

हीथ्रो एयरपोर्ट से हाईगेट इलाके में मिर्जा इब्राहिम के घर आने में पैंतालीस मिनट लगे होंगे। मैं अपनी हैरत को छुपाये उस दुनिया को देख रहा था जो कागज़ पर छपी

हुई रंगीन तस्वीर जैसी दुनिया है। सब कुछ साफ सब कुछ धुला हुआ, सब कुछ चमकता हुआ, सब कुछ व्यवस्थित, सब कुछ ख्वाब जैसा। नूर मुझे खास-खास जगहों के बारे में बताती जा रही थी लेकिन मैं ठीक से न सुन पा रहा था न समझ पा रहा था। लेकिन नूर के चेहरे पर ताज़गी और अपनी जानी-पहचानी चीज़ों के प्रति आत्मीयता का भाव ज़रूर मुझे प्रभावित कर रहा था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि मैं खुश हूं क्योंकि मैं लंदन आ गया हूं या मैं दुखी हूं क्योंकि यहां जो कुछ चमक है वह एशिया अफ्रीका की लूट का नतीजा है। मैं क्या करूं यह तय कर पाना जरूरी है क्योंकि में ऐसी स्थिति में यहां पंद्रह दिन कैसे रहूंगा।

मिर्जा साहब और नूर की मां पहले ही वापस आ चुके थे। उन दोनों ने हमारा स्वागत किया। मिर्जा साहब के लंबे चौड़े चमकते हुए ड्राइंगरूम में सबसे पहले खुलेपन का एहसास हुआ। दो तरफ शीशों की बड़ी-बड़ी खिड़कियां थीं जिनमें रौशनी अंदर आ रही थी और बाहर का बाग दिखाई पड़ रहा था। चमक, चमक और चमक मैं चौंधिया गया। दूसरी मंजिल के बेडरूम में जाकर हम बैठ गये। नूर के चेहरे से नूर फटा पड़ा रहा था। वह बहुत खुश लग रही थी। मैंने सोचा ये शादी कहीं बहुत गलत तो नहीं हो गयी है। नूर की जो दुनिया है वो मेरी नहीं है। मेरी दुनिया इससे कितनी अलग है, कितनी अजीब और भोंड़ी है, कितनी अधूरी है।

मैंने नूर की तरफ देखा बिल्कुल हिन्दुस्तानी नक्शोनिगा" की यह लड़की पूरी हिन्दुस्तानी नहीं लगती। इसके चेहरे पर कुछ ऐसा है जो इसे योरोप से जोड़ता है। लेकिन है ग़जब की खूबसूरत और अगर पन्द्रह बीस दिन के तजरूबे के बाद किसी के बारे में कुछ कहा जा सकता है तो मैं यही कहूंगा कि नूर अच्छी लड़की है, सादगी है, हमदर्दी है, सच्चाई है। वह मुझे गुमसुम बैठा देखकर समझ गयी कि मेरी मानसिक हालत क्या हो सकती है। वह चुपचाप मेरे पास आई और मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर बैठ गयी। मैं मुस्कुराने लगा।

नूर ने मुझे लंदन इस तरह घुमाना शुरू किया जैसे कोई बच्चा अपना खिलौना दिखाता है। वह सेण्ट्रल लंदन की गलियों में इस तरह घुसती थी जैसे किसान अपने

खेत में घुसता है। कहां से कहां पहुंच गयी, किधर से किस तरफ ले आयी ये पता ही न चलता और वह इस पर खूब हंसती थ। हर जगह जुड़ी यादें थी उसके पास यहां पहली बार अपनी स्कूल की ट्रिप पर आई थी। यहां पहली बार डैडी के साथ कुछ खरीदने आई थी। मुझे पता था कि यही सेण्ट्रल लंदन में मिर्जा साहब की ज्वलरी का शोरूम है, लेकिन वह मुझे नहीं ले गयी। कहने लगी ये नाम डैडी का है। वही ये सब दिखायेंगे।

नूर अंग्रेजी में 'ऐटहोम फील` करती है। बोलने को हिन्दुस्तानी भी बोल लेती है लेकिन उसके पास हिन्दुस्तानी के बहुत कम शब्द हैं क्योंकि हमेशा घर में ही हिन्दुस्तानी बोली है। अंग्रेजी मेरे लिए विदेशी भाषा ही है। बोलना अलग बात है लेकिन बोलने का मज़ा मिलना अलग चीज है। तो मुझे अंग्रेजी बोलकर मज़ा नहीं आता। हम दोनों ने दिलचस्प समझौता कर लिया है। वह लगातार अंग्रेज़ी बोलती है मैं लगातार हिन्दुस्तानी बोलता हूं। वह इस पर खुश है कहती है उसे हिन्दुस्तानी के नये-नये शब्द पता चल रहे हैं।

एक दिन मिर्जा साहब ने मुझे अपनी 'इम्पायर` दिखाई। मैं सचमुच बहुत डर गया। मुझे लगा कि मेरे ऊपर इतनी बड़ी जिम्मेदारी आ गयी है। करोड़ों खरबों रुपये का कारोबार अब मेरा हो गया। मिर्जा साहब

बार-बार कह रहे थे कि ये सब नूर का और तुम्हारा है। नूर तो शायद इसकी आदी है लेकिन मैं तो न हूं और न शायद हो सकता हूं। मैं स्वामित्वभाव से परेशान हो जाता हूं और न कि यहां इतना है। शायद सम्पन्नता या विपन्नता का अभ्यस्त होने में समय लगता है।

नूर को आठ महीने लंदन में रुकना था क्योंकि वह कोई कोर्स कर रही थी। मुझे वापस आना था। वापस आने से पहले मिर्जा साहब ने मुझसे कहा कि उन्होंने मुझे शादी का तोहफा नहीं दिया है और अब देना चाहते हैं। तोहफे में उन्होंने मुझे दिल्ली में एक वेल फर्शिण्ड बंगला दिया। मैं तो हैरान रह गया। फिर समझ गया कि यह नूर के ख्याल से

दिया गया है। मिर्जा साहब ने कहा कि दिल्ली में मेरा वकील तुम्हें कागज़ात दे देगा। तुम "फौरन शिफ्ट हो जाना। इंशाअल्लाह आठ महीने बाद नूर वहां पहुंच जायेगी।

मुझे एयरपोर्ट छोड़ने नूर और बॉब आये थे। बॉब यानी राबर्ट बर्नाड नूर के स्कूल से लेकर यूनीवर्सिटी तक क्लासमेट रहे हैं। नूर ने जब पहली बार मुझे बॉब से मिलाया था तो मुझे सदमा हुआ था। मेरे दिमाग में अंग्रेजों के बारे में खासतौर पर उनकी जो छवि मेरे दिमाग में थी वह तड़ातड़ यानी बाआवाज़ टूट गयी थी। मतलब यह कि दो-चार मुलाकातों में ही बॉब इतने सज्जन, इतने शरीफ, इतने सीधे, इतने समझदार, इतने योग्य, इतने हमदर्द, इतने नरम दिल, इतने कला और साहित्य प्रेमी, इतने प्रगतिशील, इतने साफगो, इतने अहिंसक, इतने सौम्य, इतने सहिष्णु लगे थे कि मैं उन्हें बेहद पसंद करने लगा था। बॉब के बारे में नूर ने बताया था कि बॉब अपने परिवार की पांचवी पीढ़ी है जो आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी से पढ़ी हुई है और उन्होंने ब्रिटेन की मानवतावादी, उदार, सहिष्णु, वैज्ञानिक मूल्यों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी आत्मसात किया है। उनमें किसी तरह के 'रंग-नस्ल` पूर्वाग्रह भी नहीं है। बॉब लंदन के किसी बड़े पुस्तकालय में लायब्रेरियन हैं और इसके अलावा अखबारों में लिखते रहते हैं। सेण्ट्रल लंदन में फ्लैट है जो उनके पितामह ने खरीदा था। बॉब अपने फ्लैट से लायब्रेरी पैदल जाते हैं। इसमें उन्हें पूरे पच्चीस मिनट लगते हैं। वे चाहें तो बस, कार, मैट्रो से भी ऑफिस जा सकते हैं।

बॉबा का पूरा व्यक्तित्व उनके चेहरे पर झलक आया है और सुंदर न होते हुए भी वे बहुत आकर्षक लगते हैं।

एयरपोर्ट पर मुझे विदा करते समय नूर के साथ बॉब भी थोड़े भावुक हो गये थे। मेरे लिए यह थोड़ा अटपटा-सा था, पर क्या कर सकता था।

जनता बहुत जल्दी खुश होती है और बहुत देर में नाराज़ होती है। आजकल देश की जनता खुशी में पागल है। जेलखानों के फाटक खुल रहे हैं और नेता बाहर आ रहे हैं। जश्न मनाया जा रहा है। सरयू भी निकल आया है। लेकिन वह काफी हाउस नहीं आया और न किसी से मिला। बताते हैं वह बहुत 'बिटर` हो गया है। कहता है उससे किसी का कुछ लेना देना नहीं है। वह अकेला कमरे पर पड़ा रहता है। अपने सम्पादक समरेश जी से भी मिलने नहीं गया जो लोकसभा में आ गये हैं। विक्टर डिसूज़ा सिविल एवीएशेन मिनिस्टर हो गये हैं। जो कुछ नहीं थे वे सब कुछ हो गये हैं और जनता मान रही है कि यही सही है, इसलिए हर्ष और उल्लास में डूबी हुई है लेकिन क्या मैं भी खुश हूं? जनता तो अंग्रेजों के जाने के बाद भी बहुत खुश थी, बहुत उत्साह में थी, जश्न मनाये जा रहे थे, गीत गाये जा रहे थे, पर हुआ क्या? और अब क्या होगा? पर जो हुआ अच्छा हुआ क्योंकि यह पता तो चला कि धर्म और जाति के समीकरणों के ऊपर भी कुछ है। आज बिरादरियों की हार हुई है। आज मैं चुनाव में खड़ा होता तो जीत जाता। घोसी भी मुझे वोट देते।

काफी हाउस में फिर से लोग काफी पीने लगे हैं। सन्नाटा भाग गया है। महफिले जाग उठी हैं। आज निगम जी बहुत चहक रहे हैं क्योंकि उनके करीबी नेता सीताराम केन्द्रीय मंत्री मण्डल में आ गये हैं। उन्हें पर्यटन मंत्रालय मिला है। रावत भी अब राजनीति पर गर्मागर्म बहस कर रहा है। नवीन जोशी ने खुशी में मेरी एक सिगरेट सुलगाई तो रावत ने कहा, 'साले तुम सिगरेट न पिया करो. . .एक फेफड़े के आदमी हो. .

वह भी चला गया तो क्या करोगे।` नवीन ने बुरा-सा मुंह बनाया। वह जब स्कूल में था तो उसे टी.वी. हो गयी थी और एक पूरा फेफड़ा निकाल दिया गया था।

'अरे यार कौन सा मैं 'इनहेल` करता हूं। तुम तो साले हर बात पर टोक देते हो।` नवीन ने कहा।

रात ग्यारह बजे तक मोहन सिंह प्लेस आबाद रहा फिर मैं घर आ गया। नूर टेलीविजन पर खबरें देख रही थी और गुलशनिया किचन में खाना पका रही थी। मुझे लगा चारों तरफ अमन-चैन है। सब कुछ ठीक है। कहीं न तो कुछ कमी है और न कहीं कुछ दरकार है। पता क्यों कभी-कभी कुछ क्षण अपनी बात खुद कहलवा लेते हैं उनमें चाहे जितना सच या झूठ हो।

जब से मैं कोठी में शिफ्ट हुआ हूं शकील दिल्ली में मेरे ही पास ठहरता है क्योंकि ग्राउण्ड फ्लोर पर बड़ा-सा गेस्टरूम है जो पूरी तरह इण्डेपेंनडेण्ट` है। आजकल शकील आया है। उसका 'मॉरल` कुछ गिरा हुआ जरूर है लेकिन फिर भी मजे में हैं। उसने पिछले एक साल में खासी कमाई कर ली है और अपने क्षेत्र में 'कोल्ड स्टोरेज` खोल लिया है। नूर उसे बहुत पसंद तो नहीं करती लेकिन चूंकि मेरा दोस्त है इसलिए सारी औपचारिकताएँ पूरी करती है।

'देखो, कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा, भानमती का कुनबा जोड़ा . . . तुम्हें लगता ये सब चलेगा? मैं चैलेंज करता हूं साल छः महीने के अंदर ही ये सब ढेर हो जायेंगे।` शकील ने कहा।

'हो सकता है तुम ठीक कह रहे हो. . .लेकिन इस वक्त जो हुआ वो अच्छा ही हुआ।`

'ये तुम अखबार वालों का सोचना है यार. . .बताओ क्या फ़र्क़ पड़ेगा।`

'अरे यार नेता जेल में बंद तो नहीं है।`

हम विस्की पीते रहे। गुलशन कबाब ले आया। कुछ देर बाद नूर भी आ गयी। वह किसी तरह का 'एलकोहल` नहीं लेती लेकिन पीना बुरा भी नहीं समझती। नूर के सामने शकील के अंदर और जोश आ गया।

"देख लेना यार सब ठीक हो जायेगा. . ." नूर यह सुनकर कुछ मुस्कुरा दी। शकील देख नहीं पाया।

"और सुनाओ. . .तुम्हारे बीवी बच्चे कैसे हैं?" मैंने बात बदलने के लिए सवाल पूछा।

"यार कमाल की पढ़ाई की तरफ से फिक्रमंद हूं. . .वहां कोई अच्छा स्कूल नहीं है।"

"छोटे शहरों में क्या अच्छा है?"

वह बात को टाल गया और बोला "यार मैं सोचता हूं कि कमाल का एडमीशन दिल्ली के किसी अच्छे स्कूल में करा दूं।"

"क्या उसे हॉस्टल में रखना चाहते हो?"

वह कुछ देर सोचता रहा फिर दाढ़ी खुजाते हुए बोला, 'यार मैं सोचता हूं दिल्ली आ जाऊं।`

"क्या मतलब?"

"मतलब दिल्ली में घर ले लूं।" उसने कहा, "वैसे भी महीने में दिल्ली के चार-पांच चक्कर लग जाते हैं।"

"चुनावक्षेत्र छोड़ दोगे?"

"चुनावक्षेत्र कहां भागा जा रहा है।"

"मतलब?"

"मतलब ये कि दिल्ली में ही सब कुछ होता है।" वह खामोश हो गया।

"क्या?"

"सब कुछ. . .टिकट यहीं से मिलते हैं। नेता यहीं से तय होते हैं। नीतियां यहीं से बनती हैं, बड़े-बड़े नेता यहीं रहते हैं। उनका दरबार यहीं लगता है. . .यहां जो फ़ैसले हो जाते हैं। उन्हें लागू किया जाता है देश में।" वह विश्वास से बोला।

"ओहो।"

"मेरा पन्द्रह साल का यही अनुभव है. . .जो लोग दिल्ली में हैं उन्हें फायदा पहुंचता है. . .जो दूर बैठे हैं. . .वो दूर ही रहते हैं।

"लेकिन तुम्हारा चुनाव क्षेत्र।"

"यार तुम क्या बात करते हो? चुनाव क्षेत्र है क्या? मुश्किल से पचास आदमी हैं जिनके हाथ में वोट हैं। उन पचास आदमियों को दिल्ली बैठकर आसानी से साध जा सकता है। सबके सालों के दिल्ली में काम पड़ते हैं। कोई हज पर जाना चाहता है, कोई अपने लड़के को दुबई में नौकरी दिलाना चाहता है, कोई आल इण्डिया मेडिकल इंस्टीट्यूट में ऑपरेशन कराना चाहता है. . .ये सब काम कहां होते हैं? दिल्ली में? और फिर क्षेत्र में मेरी उपस्थिति तो है ही है। मेरा घर है, मेरे बाग हैं, मेरा पेट्रोल पम्प है, मेरा कोल्ड स्टोरेज है, मेरी मार्केट है. . .और क्या चाहिए।"

"बेगम रहेंगी तुम्हारी दिल्ली।"

"अब ये उनकी मरज़ी . . .लगता तो नहीं।"

"तो यहां मज़े करोगे।"

वह दबी-दबी सी हंसी हंसने लगा।

मेरी हाथ में वार्ड नंबर और बेड नंबर की पर्ची है जो मुझे कल ही बाबा ने दी थी। उसे किसी ने मेरे लिए मैसेज दिया था कि अलीगढ़ से जावेद कमाल दिल्ली ले लाये गये हैं और अस्पताल में भर्ती है। होते हुआते आज चौथा दिन है। सोचा जावेद कमाल बीमार हैं। इलाज चल रहा है। उनके लिए कुछ फल वग़ैरा ही लेता चलूं। आश्रम के चौराहे से फल खरीदे और अस्पताल आ गया। बेमौसम की बारिश तो नहीं है लेकिन छींटे पड़ रहे हैं।

क्या आदमी है यार जावेद कमाल। मुझे अलीगढ़ में बिताये दिन याद आ गये। वे शामें याद आ गयीं जब जावेद कमाल की कैंटीन में महफ़िलें जमा करती थीं और वे अपने दोस्तों पर पानी की तरह पैसा बहाते थे। उनके शेर याद आ गये। उनकी दावतें याद आ गयीं। उनका फक्क़ड़पन और अकड़ूपन याद आ गया। रॉ सिल्क की शेरवानी, चौड़े पांयचे का पाजामा, सलीम शाही जूते, गेहुआँ रंग, लंबे सूखे बाल, बड़ी बड़ी रौशन आंखें, हाथों में पानों का बण्डल और विल्स फिल्टर सिगरेट की दो डिब्बियां. . .उनकी गलियां. ..रामपुर के लतीफ़े. . .फिर कैंटीन का बंद होना. . .उन्हें पी.आर.ओ. आफिस में क्लर्की करते देखना।

वार्डों के चक्कर लगाता रहा। पता नहीं सोलह नंबर का वार्ड कहां है। वैसे भी अस्पताल मुझे नर्वस कर देते हैं और यह विशाल काय सरकारी अस्पताल जहां हर तरफ गंदगी है, जहां गैलरियों में मरीज़ लेटे हैं, जहां गरीबी और भुखमरी अपने चरम पर दिखाई देती है, मुझे और ज्यादा नर्वस कर रहे हैं लेकिन वार्ड नंबर सोलह और बेड नंबर सात तक तो जाना ही है। वहीं चिर परिचित मुस्कुराहट आयेगी उनके चेहरे पर।

वार्ड के अंदर आ गया। लंबा चौड़ा हाल है जहां तीन तरफ मरीज भरे पड़े हैं। बेड नंबर कहां लिखे हैं? शायद नहीं है? या किसी ऐसी जगह लिखे हैं जो अस्पताल वालों को ही नज़र आते हैं। बहरहाल पूछता हुआ बेड नंबर सात पर पहुंचा देखा बेड खाली है। लगता है कहीं और शिफ्ट कर दिया है। मैं कुछ देर खाली बेड को देखता रहा। आसपास जो मरीज थे वे बता न सके कि जावेद कमाल को किस वार्ड में शिफ्ट किया गया है। कुछ देर बाद गुज़रती हुई नर्स से पूछा तो जवाब देने के लिए रुकी नहीं, चलते चलते बोली- 'ही एक्सपायरड यस्टर डे।`

मैं सन्नाटे में आ गया। जावेद कमाल कल मर गये। मर गये? कई बार अपने आपसे सवाल किया। जवाब नहीं आया कि मर गये। मैं खाली बेड को देखता रहा। मर गये जावेद कमाल? मुझे देर हो गयी। मैं बेड को देखता रहा। वहां कुछ न था। गंदे से गद्दे पर गंदी सी चादर बिछी थी जिसमें इधर-उधर कई धब्बे और छेद थे। मैं धीरे-धीरे आगे बढ़ा। हाथ में फल वाला बैग था उसे बेड के नीचे सिरहाने की तरफ रख दिया। इससे पहले कि आसपास वाले मुझसे कुछ पूछते मैं तेज़ी से बाहर निकल गया। अब भी फुहार पड़ रही थी। पूरा शहर गीला-गीला हो रहा था। मेरी आंखों में आंसू आ गये। मैं अपने आपको कन्विंस नहीं कर पाया कि जावेद कमाल मर गये हैं। यार जावेद कमाल जैसा आदमी कैसे मर सकता है? जो यारों का यार हो, जो मनमौजी और मस्त हो, जो जिंदगी की हर खूबसूरत चीज़ से प्यार करता हो, जो लतीफ़ों का बादशाह हो, जो गालियों का एक्सपर्ट हो वो मर कैसे सकता है. . .मैंने आंखों से आंसू पोंछे. . .नहीं, जावेद कमाल मरे नहीं. . .शायर कभी नहीं मरते. . . दोस्त कभी नहीं मरते. . .और वो भी जावेद कमाल जैसे दोस्त . . . जो आन-बान से रहते हों, जो दोस्तों के लिए कभी इतना-इतना झुक जाते हों कि जमीन को चूम लें और दुश्मनों के लिए सीना तानकर इस तरह खड़े हो जाते हों कि सिर बादलों से टकराने लगे. . .वो मर कैसे सकते हैं. . .चांदनी रातें. . .कच्ची पगडण्डियां, हवा के झोंके, ओस की बूंद, गुलाब के फूल मर कैसे सकते हैं. . .अब मैं रोने लगा. . . अस्पताल के बाहर शायद बहुत लोग ये करते होंगे. . .किसी ने तवज्जो नहीं दी. . .मुझे यकीन है जावेद कमाल नहीं मरे. . .दुनिया झूठ बोलती है. . .

सरयू जेल से छूटते ही घर चला गया। वापस तब भी किसी से नहीं मिला। बस उड़ी-उड़ी बातें सुनने में आती रही। ये भी पता नहीं चला कि वह कहां नौकरी कर रहा है क्योंकि उसका अख़बार तो बंद हो ही चुका था। मैंने नवीन जोशी, रावत और मोहसिन टेढ़े ने सोचा कि सरयू से चलकर मिला जाये। हम रावत के नेतृत्व में क्योंकि रावत का नेतृत्व करने का सबसे ज्यादा शौक है, सरयू के कमरे पहुंचे। वह कमरे पर ही था मिल गया। हम सब को एक साथ देखकर उसके चेहरे पर अजीब से भाव आये कि पता नहीं। उसे खुश होना चाहिए या कुछ और महसूस करना चाहिए।

उसने विस्तार से अट्ठारह महीने का लेखा-जोखा दिया। सबसे अहम बात तो यही बताई कि अमरेश जी अपने बयान में साफ-साफ कहा था कि अखबार में केवल उनका नाम संपादक के तौर पर जाता था लेकिन उसमें जो भी छपता था उसका निर्णय सरयू डोभाल लेते थे। मतलब यह कि असली अपराधी वही है। इसके बाद सरयू का कहना था कि जेल में उसे पार्टी की तरफ से कोई मदद नहीं मिली। अगर उसके साथ आर.एस.एस. के लोग न होते तो वह शायद मर जाता। मुझे यह डर लगने लगा कि सरयू कहीं आर.एस.एस. में न चला जाये। लेकिन मैं खामोश रहा। सरयू बताता रहा कि तिहाड़ में दूसरे समाजवादी कैदी आराम से थे। उनके पास पैसा भी था, उनकी जरूरतें भी पूरी होती थी और जेलवाले भी उनसे कुछ डरते थे क्योंकि उनके पीछे राजनैतिक ताकत थी। मुझे पार्टी ने कुछ नहीं समझा क्योंकि शायद मैं उनका मेम्बर

नहीं हूं लेकिन उनके अखबार का पत्रकार था। डिसूजा इसके मालिक थे। अमरेश जी प्रधन संपादक थे और इस अखबार के काम करने की वजह से ही गिरफ्तार किया गया था। क्या पार्टी की यह जिम्मेदारी नहीं बनती थी कि मेरा भी ध्यान रखा जाये? सब जानते हैं विक्टर के पास पैसे की कमी नहीं है, साधनों की कमी नहीं है।``

"और अब तो वह मिनिस्टर है।" रावत ने कहा।

"इन लोगों की तरफ से मैं बहुत निराश हुआ, दुखी हुआ, अपमानित महसूस किया मैंने. . .मुझे यार आर.एस.एस. वाले तौलिया साबुन दिया करते थे. . .यार. . .

"सरयू कहीं तुम आर.एस.एस. तो नहीं ज्वाइन कर लोगे?" मैंने पूछ ही लिया।

"आर.एस.एस. ज्वाइन करने की मेरी उम्र निकल गयी।" वह हंसकर बोला, देख निजी तौर पर, व्यक्तिगत स्तर पर मुझे वे अच्छे लोग लगे। सामाजिक स्तर पर, राजनैतिक स्तर पर मैं उनसे सहमत नहीं हो सकता. . .बल्कि हो सकता है मैं जेल के अनुभवों के आधार पर आर.एस.एस. पर किताब लिखूँ. . .वैसे मैंने ये कुछ कविताएं लिखी है कहो तो सुनाऊं।"

सरयू ने कविताएं सुनाईं तो सन्नाटा गहरा हो गया। बिल्कुल अलग ढंग की बड़ी सशक्त और मार्मिक कविताएं लिखी थी उसने।

"इन कविताओं के छपते ही तुम हिंदी के प्रमुख कवियों में. . ." रावत ने कहा।

"अरे छोड़ो यार।"

"नहीं, कविताएं बहुत ज्यादा अच्छी हैं. . .आज हिंदी में कोई ऐसा नहीं लिख रहा।" नवीन ने कहा।

इसके बाद नवीन ने भी अपनी कुछ नयी कविताएं सुनायीं। देर तक हर सरयू के यहां बैठे रहे। सरयू ने बताया कि उसकी बात 'नया भारत` में चल रही है, हो सकता है वहां नौकरी लग जाये।

वापसी पर मैं मोहसिन टेढ़े को अपने साथ लेता आया। ये हम दोनों के लिए अच्छा है। उसे घर का पका खाना मिल जाता है। नूर उससे गप्प शप्प कर लेती है। उसे मोहसिन टेढ़े के कुछ अंदाज जैसे छोटी-छोटी बातों पर बेहद आश्चर्य व्यक्त करना आदि पसंद आते हैं क्योंकि वह उनके नकलीपन को पहचान लेती है। मोहसिन टेढ़ा उससे योरोप के बारे में सैकड़ों सवाल करता है। नूर थोड़ी बहुत फ्रेंच भी जानती है और मोहसिन को गाइड करती रहती है कि यहां से डिप्लोमा करने के बाद उसे फ्रांस की किस यूनीवर्सिटी में जाना चाहिए।

मोहसिन टेढ़ा नूर को अपनी जायदाद के झगड़ों, अपने अकेले होने, जायदाद बेचकर दिल्ली शिफ्ट हो जाने के इरादों, अपनी पोलियो की बीमारी वगैरा के बारे में बताता रहता है। नूर हिन्दुस्तानी तेजी से सीखी है और अब वह अंग्रेज़ी की बैसाखी के सहारे नहीं है। उसकी सबसे बड़ी टीचर है गुलशनिया यानी गुलशन की बीवी जो हम लोगों के साथ ही रहते हैं। इस कोठी में आने के बाद अब्बा ने गांव से गुलशन को यहां भेज दिया था।

मैं ये समझ रहा था कि शायद नूर को दिल्ली ममें 'एडजस्ट` करना मुश्किल होगा। लेकिन वह बड़े आराम से रहने लगी। पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन सेंटर में उसे नौकरी मिल गयी है। वहां अपने काम से खुश है। सुबह मैं उसे आफिस छोड़ता हूं। शाम कभी-कभी जब मुझे कहीं जाना होता है तो स्कूटर करके घर आ जाती है। बिल्कुल सीधी-साधी सामान्य और निश्चिंत जिंदगी जी रही है। दिन में एक बार लंदन फोन

करना नहीं छुटा है। जब तक वह ममी से पन्द्रह मिनट बात नहीं कर लेती तब तक खाना हज़म नहीं होता।

आफिस पहुंचा तो हसन साहब ने बताया कि मेरी तलबी हुई है। ब्यूरो चीफ़ ने मुझे बुलाया है।

"क्या मामला हो सकता है हसन भाई, अब तो दूसरी आजादी का जश्न भी मनाया जा चुका है।"

"टोटल रेवोल्यूशन` आ गया है. . .फिर भी हो सकता है कहीं दुम फंसी रह गयी हो. . .जाओ देखो क्या कहते हैं", वे बोले।

सक्सेना साहब के विशाल कमरे में पहुंचा तो पता चला कि वे एडीटर इन चीफ के पास हैं और मैं कुछ देर बात आऊं। इधर-उधर देखा तो सबिंग में सुप्रिया दिखाई दे गयी। मैं उसके पास आ गया। उसके चेहरे पर वही उदासी थी। उसने बताया कि उसके भाइयों कोमल और सुकुमार का अभी तक कोई पता नहीं चला है और वह कलकत्ता जा रही है। हम दोनों कुछ देर तक पश्चिम बंगाल के आतंक की चर्चा करते रहे। थोड़ी देर बाद, उसे दिलासा देने के बाद मैं उठा तो उसके हाथ पर मैंने एक क्षण के लिए अपना हाथ रख दिया। वह मुस्कुरा दी। फीकी सी मुस्कुराहट।

सक्सेना साहब हैं तो ब्यूरो चीफ लेकिन माना जाता है कि मैनेजमेण्ट की नाक का बाल हैं और कभी-कभी एडीटर-इन-चीफ के ऊपर भी हावी हो जाते हैं। उन्होंने मुझसे बैठने के लिए और एक दो काग़जों पर दस्तख़त करके बोले "पिछले साल तुमने अलीगढ़, संभल वगैरा पर जो रिपोर्ट की थी वो मैंने पढ़ी हैं।"

"जी।"

"काफी संवेदना है तुम्हारे लेखन में. . .इमोशन्स का भी अच्छा इस्तेमाल करते हो।"

मैं समझ नहीं पा रहा था कि यह भूमिका क्यों बांधी जा रही है। कुछ देर के बाद वे नुक्ते पर आ गये। देखो पार्लियामेंट बंधुआ मज़दूर वाले मसले पर बहुत सीरियल है। हम पर यह इल्जाम तो है ही है कि हम 'अर्बन` हैं। हमारे यहां गांव के बारे में कुछ नहीं छपता या कम छपता है. . .अब सारे अखबार बंधुवा मज़दूरों पर छापें ओर हम ख़ामोश रहें यह भी नहीं हो सकता. . .तुम्हें इस तरह की रिपोर्टिंग में दिलचस्पी भी है", वे बोलते-बोलते रुक गये। आदेश नहीं देना चाहते थे। पहले यह जानना चाहते थे कि मुझे कितनी रुचि है।

"लेकिन हसन साहब. . .मैं तो. . ."

"उनसे बात हो गयी है. . .हम तुम्हें ब्यूरो मे ले लेंगे. . .तुम्हें तो कोई. . .?"

"जी नहीं, मैं तो ये काम खुशी खुशी करूंगा।"

मैंने 'हां` कर दी थी लेकिन एक सवाल मेरे दिमाग की दीवारों से टकराता रहा। अगर पार्लियामेण्ट में 'कुलक लॉबी` और 'उद्योग लॉबी` के बीच टकराव की स्थिति न होती तो क्या बधुआ मज़दूर मुद्दा आज भी उसी तरह दबा न पड़ा रहता जैसे आज़ादी के बाद से लेकर आज तक दबा पड़ा था? क्या इसका मतलब यह हुआ कि मुद्दे भी 'दिए` जाते हैं? कौन देता है? वे लोग जो सत्ता संघर्ष में या सत्ता बनाये रखने की कोशिश में

लगे हुए हैं? क्या इसका यह मतलब हुआ कि मुद्दे या तो वास्तविक मुद्दे नहीं होते या उनको उठाने वालों का उद्देश्य मुद्दा विशेष नहीं बल्कि कुछ और होता है। कभी-कभी कुछ मुद्दे इसलिए भी उठाये जाते हैं कि वास्तविक मुद्दों से लोगों का ध्यान हटाना जा सका। लेकिन इतना तय है कि बंधुआ मज़दूरी का मुद्दा ग्रामीण जीवन के शोषण की 'हाईलाइट` करेगा।

सक्सेना साहब ने जो नाम और फोन नंबर दिया था वहां फोन किया तो "फौरन डॉ. आर.एन. सागर से बात हो गयी। उन्होंने बताया कि 'रुरल इंस्टीट्यूट` की टीम अगले सप्ताह पूर्णिया जा रही है और मैं उस टीम के साथ जाना चाहूं तो जा सकता हूं। अगले दिन मैं इंस्टीट्यूट पहुंच गया। यहां डॉ. आर. एन. सागर से मिलना था। वे अभी तक आये नहीं थे। मैं इंतिज़ार करने लगा। कुछ देर बाद आये तो कई अर्थों में बहुत अजीब लगे। दिन का ग्यारह बजा था लेकिन यह लगता था कि डॉ. सागर के लिए रात के आठ का समय है क्योंकि वे 'महक` रहे थे। उसके विशाल सिर पर ढेर सारे बाल और चेहरे पर कार्ल मार्क्स कट फहराती हुई दाढ़ी थी। बंद गले का काला कोट और पतलून पहने थे पर कपड़े उनके शरीर पर ऐसे लग रहे थे जैसे यह शरीर इस तरह के कपड़ों के लिए बना ही नहीं। कुछ ही देर में उन्होंने बंधुआ मज़दूर सर्वेक्षण के बारे में दुर्लभ जानकारियां दी। यह साबित होते देर नहीं लगी कि डॉ. सागर न सिर्फ विषय के विशेषज्ञ हैं बल्कि बहुत पढ़े लिखे और सोचने समझने वाले, मौलिक किस्म के आदमी हैं। उन्होंने मुझे चाय पिलाई और खुद पानी पीते रहे क्योंकि जाड़े के इस मौसम में भी उन्हें खूब पसीना आ रहा था और रुमाल से अपना माथा पोछ रहे थे।

एयरपोर्ट पर ही पता चला कि पूर्णिया जाने वाली टीम में सरयू भी 'नया भारत` की तरफ से जा रहा है। अब चूंकि मेरा काफी हाउस जाना छूट गया था इसलिए सरयू से मुलाकात ही न होती थी। एयरपोर्ट पर उसे देखकर खुश हो गया क्योंकि इतने सालों बाद उसके साथ कुछ समय बिता सकूंगा और अपने पुराने साहित्यिक मित्रों के बारे में जानकारियां मिलेंगीं। सरयू जब भी मिलता है यह शिकायत करता है कि मैंने कहानियां लिखना क्यों बंद कर दिया है। मेरे पास इसका सवाल का कोई जवाब नहीं है। पत्रकारिता का काम सोख लेता है लेकिन दूसरे पत्रकार भी तो लिखते हैं? फिर भी

शायद यह लगता है कि मैं जैसा लिखना चाहता था वैसा लिख नहीं सकूंगा या लंबे अंतराल के बाद आत्मविश्वास डिग जाता है या दूसरे तो कहां के कहां निकल गये और मैं यही रह गया। मैं उस दौड़ में क्या शामिल होऊं? बहरहाल सरयू ने एयरपोर्ट पर चाय पीते हुए फिर यही से बात शुरू की और कहा कि यार तुमने कहानियां लिखनी क्यों बंद कर दिया है। मैंने सवाल को टालते हुए पुराना जवाब दिया कि यार टाइम ही नहीं मिल पाता, ये अखबार का काम बड़ा जानलेवा होता है।

सरयू सागर साहब को पहले से जानता है। उसने जो जानकारियां दीं उनसे सागर साहब की नामुकम्मल तस्वीर पूरी हो गयी। सरयू ने बताया "दरअसल सागर साहब स्वयं एक बंधुआ मज़दूर परिवार में पैदा हुए थे। सागर उन्होंने उपनाम रखा था कि किसी ज़माने में कविताएं लिखा करते थे। वे पता नहीं कैसे गांव के स्कूल में पहुंच गये थे। उसके बाद तो उन्होंने कभी पीछे नहीं देखा। सरयू ने बताया यार जीनियस हैं सागर साहब. . .तुम सोचो मूल जर्मन में 'दास कैपिटल` पर इनकी टीका बर्लिन विश्वविद्यालय ने छापी है। इनके जैसा पढ़ा लिखा और मौलिक सोच रखने वाला यार मैंने तो आजकल देखा नहीं।"

किसी के बारे में कुछ सुनकर न प्रभावित होने वाली प्रवृत्ति के कारण मैंने इन बातों का कोई नोटिस नहीं लिया और सोचा खुद ही पता चल जायेगा सागर साहब क्या है?

यह 'हापिंग` "लाइट है दिल्ली से लखनऊ और फिर पटना और फिर रांची जहां हमें दो दिन रुकना है ताकि 'रीजनल रुरल डवलप्मेंट इंस्टीट्यूट` में 'लैण्ड रेवेन्यु` रिकार्ड देख लें। उसके बाद पूर्णिया जाना है। हापिंग "लाइट बड़े मज़े से लखनऊ में दो घण्टे के लिए खड़ी हो गयी। यही हरकत उसने पटना में भी की। लेकिन मैं और सरयू बेफिक्र थे कि सालों बाद मिले हैं और बातचीत करने का मौका मिल रहा है।

- "यार तुम्हें मालूम है अमरेश जी का क्या हुआ?"

- "कौन अमरेश जी?"

- "यार वही. .कभी कभी काफी हाउस भी आते थे. . .जार्ज मैथ्यू के दोस्त. . .

- "हां हां याद आ गया। बताओ क्या हुआ?"

- "यार कुछ समय में नहीं आता क्या हो रहा है। अभी पिछले महीने मुझे अमरेश जी से मिलना था। मैं उनसे मिले डिफेन्स कालोनी डी-१३ में पहुंचा और सीधे सर्वेण्ट क्वार्टर पहुंच गया। क्योंकि अमरेश जी इससे पहले कोठियों के सर्वेण्ट क्वार्टरों में ही किराये पर रहा करता थे। पर कोई हमें मुख्य कोठी में ले गया। यार अमरेश जी ने वह कोठी खरीद ली है। क्या कोठी है यार. . .और डियर क्या लायब्रेरी बनाई है. . .लाखों रुपये की तो किताबें हैं. . .हर चीज़ 'टाप` की है. . .

- "ये सब हुआ कैसे?"

- "यार बताते हैं कि किसी डील में जार्ज मैथ्यू ने कई सौ करोड़ बनाये हैं और इस डील में अमरेश जी भी साथ थे. .अब बताओ यार मैं तो ये सब देखकर भी यक़ीन नहीं कर सकता।" वह बताते बताते शरमाने लगा।

- "जार्ज मैथ्यू की तो समाजवादी छवि है. . .ट्रेड यूनियन बैक ग्राउण्ड है. . .

- "यही तो हैरत है यार. . ."

- "हैरत करने का ज़माना चला गया प्यारे. . ."

- "अच्छा और सुनो. . .कामरेड सी.सी. कनाडा में जाकर बस गये हैं।"

- "क्या अमित के साथ वो भी गये?"

- "हां. . .कहते हैं उन्होंने जेल में माफी मांग ली थी. . .उनके भाई कनाड़ा से आये थे और उन्हें अपने साथ ले गये।"

- "ओर सुनो भुवन पंत. . .उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री का पी.एस. हो गया है।"

- "वही जो सब को डांटता था और अपने को सबसे बड़ा क्रांतिकारी समझता था।"

- "हां वही।"

- "तो यार तुम्हारे सब नक्सलवादी वाले ऐसे ही निकले।"

- "नहीं यार. . ." वह बुरा मानकर बोला जो लोग काम करते हैं वो तो जंगलों में हैं. . .उन्हें क्या मतलब है काफी हाउस या शहरों से. . .ऐसे हज़ारों हैं. . .

रांची में ज़मीन खरीद-फ़रोख्त के रिकार्ड देखिए तो आपको हक़ीकत का पता चल जायेगा।" सागर साहब ने हमें एक मोटा-पोथा थमा दिया।

"ये जो आप रांची शहर देख रहे हैं यह आदिवासियों की ज़मीन पर बसा है। आज यह करोड़ों रुपये की ज़मीन है. . .लेकिन यह किस तरह, कितना पैसा देकर खरीदी गयी है, ये रिकार्ड बतायेगा. . .कहीं कहीं . . .ज़मीन खरीदने वालों के नाम नहीं दिए गये हैं. .क्योंकि वे लोग इतने असरदार. . .इतने बड़े. . .इतने सम्मानित हैं कि चोरों की सूची में उनका नाम दर्ज करने की हिम्मत यहां किसी को नहीं है। ये देखिए. ..पांच एकड़ ज़मीन. . .सौ रुपये में बिकी. . .ये देखिए दो एकड़ जमीन. . .दस रुपये में. . .ये कहानियां नहीं हैं. . .लैण्ड रिकार्ड है. . .अगर चाहें तो मूल बैनामे भी देख सकते हैं।"

हम हैरत से रिकार्ड देखने लगे। पता लगने लगा कि देश के अंदर कितने देश हैं। देश किसका है और विदेशी कौन है?

- "हमने इन आदिवासियों के साथ वही किया है जो अमरीकी में 'रेड इण्डियन्स` के साथ किया गया था। पर इस देश में कोई यह मानता नहीं क्योंकि जिनके पास यह मानने का अधिकार है उन्होंने ही यह

अपराध किया है। आज वे सब आदिवासी बंधुआ हैं जिनके पास कल तक ज़मीन थी। उन्हें यह सज़ा क्यों मिली है? क्या इसलिए कि वे हमसे ज्यादा चतुर नहीं हैं?"

रांची में हमारी मुलाकात लेबर कमिश्नर से हुई और एक और आश्चर्य का पहाड़ टूट पड़ा।

कभी-कभी महज़ इत्तफ़ाक़ से कुछ ऐसे लोग ऐसी जगह पहुंच जाते हैं कि उन्हें वहां देखकर हैरानी होती है। लेबर कमिश्नर विनय टण्डन भी ऐसे ही आदमी हैं। उन्हें देखकर कोई यह नहीं कह सकता कि वे आई.ए.एस. होंगे। उलझे-उलझे से बेतरतीब बाल, लंबा पतला चेहरा, गहरी आंखें जिन पर मोटा चश्मा, बहुत मामूली सीधी-सीधी कमीज़ पैण्ट और पैरों में सस्ती किस्म की चप्पल। हमें बताया गया कि विनय टंडन 'सिंगिल` है मतलब अविवाहित हैं। अपना खाना खुद पकाते हैं और अपने कपड़े भी खुद धोते हैं। आफिस ठीक साढ़े नौ बजे आते हैं और शाम छः बजे जाते हैं। सरकारी गाड़ी सिर्फ दफ्तर लाती ले जाती है। अपने निजी आने-जाने के लिए वे रिक्शे का सहारा लेते हैं। विनय टण्डन को काफी लोग पागल कहते हैं। कुछ सिड़ी, सनकी, दीवाना कुछ घमण्डी और कुछ मूर्ख बताते हैं।

सुबह हम लोग तीन जीपों पर बंधुआ मज़दूरों का पता लगाने निकले। बहुत जल्दी ही डामर वाली सड़क ख़त्म हो गयी और कच्ची धूल उड़ाती पगडण्डियों जैसी सड़कों पर गाड़ी आ गयी। दो ही एक घंटे के अंदर पूरे चेहरे, हाथों और कपड़ों पर धूल की एक गहरी परत जम गयी। रास्ते के धचकों से कमर की ऐसी तैसी हो गयी। दरअसल

रास्ते और क्षेत्र की दिक्कतों को छोड़कर हमारा काम आसान था। हम खेतिहर मज़दूरों से यह पूछते थे कि क्या उन्हें एक जगह से काम छोड़कर दूसरी जगह काम करने की आज़ादी है? यदि उत्तर 'हां` में मिलता था तो बंधुआ मज़दूर नहीं हैं ओर नहीं में मिलता था तो है। उसके बारे दूसरे सवाल भी थे। पूरा परिवार बंधुआ है? कितने समय या कितनी पीढ़ियों से बंधुआ है। क्या पैसा मिलता है? कितना अनाज या जोतने के लिए ज़मीन मिलती है. . .वगैरा वगैरा. . .हमें यह भी बताया गया था कि कोई कमिश्नर 'रैंक` का आदमी कभी इस तरह के सर्वेक्षणों में नहीं जाता लेकिन विनय टण्डन के चेहरे पर ज़रा भी उकताहट कभी नज़र नहीं नहीं पड़ती थी। इन सवालों के साथ बंधुआ मज़दूरों से यह सवाल भी पूछा जाता था कि क्या साल भर खाने को अनाज हो जाता है? इसके उत्तर में आमतौर पर वे बताते थे कि दो-एक महीने जंगली पेड़ों की जड़े खाकर गुज़ारा करना पड़ता है।

मैं और सरयू बंधुआ मज़दूरों के झोपड़े नुमा घरों में जाते थे। पूरे घर में जो कुछ भी दिखाई देता था। उस सबको अगर जमा करके बाज़ार में बेचा जाये तो कोई दो रुपये का भी नहीं खरीदेगा, यह हमारी पक्की राय बनी थी। कुछ चटाइयां, चीथड़े हुए कपड़े, मिट्टी के बर्तन, मिट्टी का दिया और मुश्किल से एक टीन का कनस्तर ही दिखाई पड़ते थे। दूसरी तरफ बड़े-बड़े फार्म थे जिनमें पचास हज़ार एकड़ जमीन थी। दो हज़ार एकड़ भगवान के नाम. . .हज़ार एकड़ कुत्ते के नाम. . .इसी तरह ज़मीन पर कब्जा बनाया गया था।

एक दिन कई गांवों का चक्कर काटकर एक दिन हमारा कारवां एक कस्बे के बी.डी.ओ. कार्यालय जा रहा था। हम रास्ते में ही थे कि एक मामूली और गरीब किसान ने हाथ देकर जीप को रुकने का इशारा किया। इस जीप पर विनय टण्डन बैठे थे। उन्होंने "फौरन ड्राइवर से कहा कि जीप रोको। जीप रुकी तो पीछे वाली जीपें भी रुक गयीं और हम लोग जीप से उतर पड़े। यह गरीब किसान बता रहा था कि कस्बे के सिनेमा हाल के मालिक ने उसके लड़के के साथ मारपीट की है और थाने वाले उसकी रपट नहीं लिख रहे हैं। विनय टण्डन ने उस किसान को "फौरन अपनी जीप में बैठा लिया। ब्लाक ऑफिस में बी.डी.ओ. शायद विनय टण्डन को भी दिल्ली से आये कोई

शोधकर्ता समझे। टंडन जी ने खाये पिये मोटे और ताज़े देखने में राशी लगने वाले बी.डी.ओ. से कहा कि वे इस किसान को थाने ले जायें और एफ.आई.आर. दर्ज करा दें। इसके बाद हमने वे जानकारियां लीं जो लेना थीं और चाय पानी के बाद आगे बढ़े। कुछ ही दूर गये होंगे कि एक जीप खराब हो गयी। यह तय पाया कि लौटकर ब्लाक ऑफिस चला जाये और वहां से जीप ली जाये ताकि आगे का कार्यक्रम पूरा हो सके।

हम लौटकर ब्लाक ऑफिस की तरफ जा रहे थे तो फिर वही किसान रास्ते में मिल गया। उसने फिर हाथ दिया और टण्डन जी ने फिर जीप रुकवा दी। किसान ने बताया कि बी.डी.ओ. साहब ने थानेदार के नाम पर्चा लिख कर दिया था लेकिन थाने में फिर भी रपट नहीं लिखी गयी। टण्डन जी ने फिर उसे जीप में बैठा लिया।

बी.डी.ओ. बरात को बिदा करके सो गये थे कि उन्हें पता चला फिर सब आ गये हैं। बी.डी.ओ. को देखते ही टण्डन जी ने कहा मैंने आपको आदेश किया था कि थाने जाकर इस आदमी की एफ.आई.आर. लिखा दीजिए। आपने आदेश का पालन क्यों नहीं किया?"

आदेश शब्द सुनते ही बी.डी.ओ. के चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगी। जाहिर है कि इस शब्द के प्रयोग का अधिकार सरकारी अधिकारियों को ही है। वे गिड़गिड़ाने लगे. . .सर सर . . .मैंने पर्चा. . . ।

"यह तो आदेश नहीं था कि आप पर्चा लिखकर दें. . .आपने आदेश का पालन नहीं किया है और मैं चाहूं तो आपको अभी सस्पेण्ड कर सकता हूं।"

अब तो बी.डी.ओ. का भारी भरकम शरीर लोच खाकर ज़मीन से आ लगा।

आप सुबह इसके साथ थाने जाइये। रपट लिखवाइये। रहट की कापी लेकर कल ग्यारह बजे तक सर्किट हाउस आइये. . .और मुझे दिखाइये।"

सर्किट हाउस में रोज़ रात का खाना खाने के बाद पीछे वाले बरामदे में सब बैठ जाते थे। विनय टण्डन और सागर साहब आदिवासी समस्या और बंधुआ मज़दूरी के विषय में बातचीत करते थे। हम चार पांच लोगों का काम सवाल पूछना था। विनय टण्डन सारी उम्र आदिवासी इलाकों में ही रहे हैं। उन्होंने बताया कि मध्य प्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों में एक समय था कि जब आदिवासियों को कपड़े के दुकानदार चारों तरफ से

नाप कर कपड़ा देते थे। लंबाई चार गज़ और चौड़ाई एक गज़ इधर से . . .एक गज़ उधर से। उन्होंने बताया कि पटवारी आदिवासी क्षेत्रों में जाने वाला सबसे बड़ा अधिकारी हुआ करता था। वह मौका मुआयना करने इस तरह जाता था कि चारपाई पर बैठ जाता था और आदिवासी चारपाई अपने कंधें पर उठाये-उठाये उसे खेत-खेत ले जाकर मौका मोआयना कराते थे। एक पटवारी रेडियो का शौकीन था और अपने साथ रेडियो भी ले जाता था। चारपाई पर वह खुद बैठता था। एक आदमी सिर पर रेडियो उठाता था। दूसरा बैटरी उठाता था। दो लोग बांस में बंधे एरियल उठाते थे और इस तरह मौका मोआयना होता था। जब कभी पटवारी का दिल चाहता था वह रेडियो बजाने लगता था। रात में पूरा गांव चंदा करके उसे अच्छा-से-अच्छा खाना खिलाता थे। लेकिन पटवारी कोई बहाना बनाकर खाना नहीं खाता था। जैसे रोटियां जल गयी हैं या मुर्गे में नमक ज़्यादा हो गया है। उसके खाना न खाने से पूरा गांव डर जाया करता था और हाथ जोड़ता था कि पटवारी खाना खा लें। पटवारी के खाना न खाने से उन्हें कितना नुकसान होगा इसकी वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे। पटवारी कहता था ठीक है मैं बीस रुपये लूंगा तब खाना खाऊंगा। वे किसी न किसी तरह उसे रुपये देते थे और तब वह खाना खाता था।

सागर साहब ने बताया कि छोटा नागपुर के आदिवासी क्षेत्रों में सूद पर पैसा देना संसार का सबसे ज्यादा मुनाफा देने वाला और सुरक्षित व्यवसाय है। इतना ब्याज संसार में और कहां मिल सकता है। उन्होंने ने बताया कि एक आदिवासी ने किसी तरह सूद समेत अपना सारा कर्जा चुका दिया। महाजन ने आदिवासी से कहा कि आज तो तुम बड़े खुश होंगे कि सारा कर्जा चुका दिया है। उसने कहा- 'हां महाराज बहुत खुश हूं।` साहूकार बोला- 'तो मुंह मीठा कराओ।` वह बोला- 'महाराज अब मेरे पास एक पैसा नहीं है।` साहूकार ने कहा- 'अच्छा अगर तुम्हारे पास पैसा होता तो कितने पैसे से मुंह मीठा करा देते।` उसने कहा- 'महाराज चार आने से करा देता।` साहूकार ने कहा- 'ठीक है. . .चार आने तुम्हारे नाम खाते में चढ़ाये लेता हूं।`

"आदिवासियों की दुनिया अलग है। इतना सहयोग है उस दुनिया में कि आप उसकी कल्पना नहीं कर सकते। उनके ऊपर हमने अपनी दुनिया लाद दी है। छल, कपट, लालच और हिंसा की दुनिया के नीचे ये पिस गये हैं अब न तो जंगल हैं जो इनके पेट भरते थे, न नदियों में पानी है जहां से इनकी सौ ज़रूरतें पूरी होती थीं। विकास के नाम पर इन्हें हमें लालची और झूठा-मक्कार बना दिया है। भाई ये तो हर तरफ से मारे गये हैं. . .अब शहर में जाकर मज़दूरी के अलावा क्या चारा है? एक ज़माने के गर्वीले आदिवासी जिन्होंने बड़े-बड़े सम्राटों के साथ युद्ध किए थे आज निरीह, कमज़ोर और दया के पात्र बन गये हैं। हमारे लोकतंत्र ने इन्हें यही दिया है।" सागर साहब ने खुलासा किया।

'द नेशन` में बंधुआ मजदूरों पर मेरी रिपोर्ट छपने लगी तो हंगामा हो गया। पहली बार इतने बड़े पैमाने पर, देश के सबसे बड़े अख़बार में तस्वीरों के साथ एक ऐसी जिंदगी पेश होने लगी कि पढ़कर लोगों के रोंगटे खड़े हो गये। आजादी मिले चौथाई सदी बीत चुकी है और हमारे देश में लोगों की हालत जानवरों से भी बदतर है। एडीटर-इन-चीफ ने मुझे बुलाकर पीठ ठोकी। सक्सेना साहब तो मुझे अपनी खोज बता-बताकर नाम रोशन कर रहे थे। हसन साहब ने कहा- अच्छा है, देखे कब तक चलता है।" उनके इस

कमेण्ट से मैं कुछ परेशान हो गया। सुप्रिया ने खासतौर पर काफी पिलाई और पूछती रही कि वहां क्या क्या देखा। नूर को भी रिपोर्ट पसंद आयीं। उसने उनकी अंग्रेजी भी ठीक की थी। इस तरह उनकी भाषा भी मंझ गयी थी। कहा जा रहा है कि पार्लियामेण्ट के अगले सत्र में मेरी इन रिपोर्ट के आधार पर विषय पर चर्चा का समय भी मांगा जायेगा।

सागर साहब बहुत खुश थे। एक दिन शाम उन्होंने घर बुलाया था। कुछ दूसरे सोशल साइंटिस्ट भी वहां थे। सागर साहब के यहां पीने पिलाने का प्रोग्राम हुआ था। ये कुछ हैरत की बात थी कि सागर साहब ने अब तक अपने रहने का तरीका बिल्कुल गांधीवादी रखा हुआ था। वे खुद एक कमरे में दरी पर बैठते थे। बाकी लोगों के लिए लकड़ी की कुर्सियां थीं। दीवारों पर कैलेण्डर वो छोड़कर कुछ नहीं था। मैं जैसे जैसे सागर साहब के बारे में जानता जा रहा था वैसे वैसे उनकी विलक्षण प्रतिभा का कायल होता जा रहा था। उनका अध्ययन बहुत ज्यादा था। उनकी समझ बहुत साफ थी। शराब में उनकी बहुत ज्यादा दिलचस्पी थी। हम लोग

अपने हिसाब से पी रहे थे लेकिन सागर साहब शराब का सागर पी रहे थे। इतना पीने के बाद भी पूरे होशोहवास में थे। वे अपने इंस्टीट्यूट के नये प्रोजेक्ट की बात कर रहे थे जिसे यू.एन.डी.पी. सपोर्ट कर रहा था। मुझे उन्होंने नयी प्रोजेक्ट साइट यानी छोटा नागपुर के एक आदिवासी गांव में चलने की भी दावत दी जिसे मैंने कुबूल कर लिया। खूब पीने के बाद सागर साहब की दावत पर हम सब एक ढाबे पर गये जहां तली मछली खाई गयी और रात करीब साढ़े ग्यारह बजे बर्खास्त हुई।

बंधुआ मज़दूरों पर मेरी रिपोर्ट अहमद ने मास्को में पढ़ी थी। जहां वह दूतावास में फर्स्ट सेक्रेटरी था। उसने फोन पर मुझे मुबारकबाद दी थी और कहा था कि यार अब मिर्जा इब्राहिम की लड़की से शादी के बाद तुम ये जर्नलिज़्म वगैरा छोड़ो और बिजनेस में आ जाओ। सोवियत यूनियन बहुत बड़ा मार्केट है मैं तुम्हें यहां बेहिसाब बिजनेस दिला सकता हूं. . .अगर चाहो तो तुम और मैं साथ-साथ भी कर सकते हैं। उस इस प्रस्ताव पर मैंने उसे गालियां दी थीं और अपनी दुनिया में चला आया था।

इन रिपोर्टों के छपने के बाद पहली बार मुझे कुछ थोड़ा-सा संतोष हुआ था। दिमाग में 'कुछ करने' के कीड़े ने मुझे कुरेदने की रफ्तार कुछ कम कर दी थी। मैं सोचता था चलो राजनीति में कुछ नहीं कर सका, चुनाव हार गया, पार्टी होल टाइमर नहीं बन सका, लेखक नहीं बन सका तो क्या मैं कुछ ऐसा कर रहा हूं जो गरीब और बेसहारा आदमी के हक में है। कुछ दोस्तों खासतौर पर नवीन जोशी और रावत ने कहा था कि अंग्रेज़ी में आमतौर पर लोग ग्रामीण क्षेत्रों पर नहीं लिखते हैं। तुमने शुरुआत की है। अगर तुम दस-पांच साल इधर ही लगे रहे तो बड़ा 'कान्ट्रीब्यूशन' माना जायेगा। मैं कान्ट्रीब्यूशन से ज्यादा अपने मन को समझाने और संतोष देने के चक्कर में था। सबसे बड़ी बात तो यही कि आपको अच्छा लगे कि जो कर रहे हैं वह 'मीनिंगफुल' है।

शकील ने बसंत विहार में कोठी खरीद ली है। हालांकि आजकल दिल्ली में उसके पास कोई काम नहीं है लेकिन यहीं रहता है। कभी-कभी पार्टी ऑफिस चला जाता है। एक दो नेताओं के घरों के चक्कर मार देता है। कहता है यार जिन नेताओं के यहां पहले घुस नहीं सकता था उनसे इस दौरान पक्का याराना हो गया है। देखो यही फायदा होता है दिल्ली में रहने का।

उसकी अक्सर शामें हमारे यहां गुजरती हैं। नूर मुझसे अक्सर पूछती रहती है कि मैं शकील जैसे लोगों के साथ कैसे 'एडजस्ट' कर लेता हूं जो मुझसे बिल्कुल अलग हैं। मैं इस बात का बहुत तसल्लीबख्श जवाब दे नहीं पाता। आदमी की कैमिस्ट्री बड़ी अजीब होती है और वह समझ में आ जायेगी, यह दावा कोई आदमी खुद अपने बारें में भी नहीं कर सकता। शकील की राजनीति से मैं सहमत नहीं हूं लेकिन इतना पुराना 'एसोसिएशन' है कि हम बाकी बातें भूल जाते हैं। मैंने नूर को वह किस्सा सुनाया जब शकील ने मुझे पहली बार शराब पिलाई थी।

शकील के बेटे कमाल का दाखला तो किसी तरह दिल्ली पब्लिक स्कूल में हो गया है लेकिन उसका दिल दिल्ली में बिल्कुल नहीं लगता। मौका मिलते ही घर भाग जाता है। वैसे भी उसके रंग-ढंग बड़े लोगों के बेटों जैसे हैं। शकील के पास पैसा है और वह बेटे का दिल्ली में पढ़ाने के चक्कर में उसकी ख्वाहेशात पूरी करता रहता है।

दिल्ली से रांची वाली "लाइट पर सागर साहब ने मुझे गलहौटी प्रोजेक्ट के बारे में बताना शुरू किया था। ख़ासा दिलचस्प प्रोजेक्ट लग रहा था। उन्होंने बताया यू.एन.डी.पी. वाले किसी आदिवासी क्षेत्र में विकास का एक मॉडल प्रोजेक्ट चलाना चाहते थे। इस सिलसिले में उन्होंने हमारे इंस्टीट्यूट से सम्पर्क किया। मैं मिस्टर ब्लेक से मिलने गया। मैंने साफ कह दिया कि पैसे से डिवलपमेंट नहीं होता। मतलब नालियां बना देना, हैण्डपम्प लगा देना, कर्ज दे देना, खुशहाली की गारंटी दे देना विकास नहीं है। इस पर ब्लैक चौंके और पूछा फिर डिवलपमेंट क्या है? मैंने कहा लोगों को बदलना, लोगों को जागरूक बनाना, उनके अंदर बदलाव की चेतना पैदा करना, उनके अंदर संगठन और संयोजन की शक्तियों का विकास करना, उन्हें सामूहिकता से जोड़ना. . .ये विकास है यानी विकास की पहली शर्त है।"

फिर?

"बड़ी बहस होती रही। मैंने उनसे कहा कि प्रोजेक्ट को मैं अपने तौर पर, अपनी परिकल्पना के आधार पर करूंगा। पहले तो उन्होंने सोचने का वक्त मांगा और मुझसे एक नोट बनाकर देने को कहा। मैंने नोट दे दिया और भूल गया। सोचा ये लोग जो खाँचों में सोचते हैं, जो सिर्फ आँकड़ों में बात करते हैं उनकी समझ में यह सब नहीं आयेगी।"

"इसके बाद?"

"तीन महीने बाद उनका फोन आया कि मैं जाकर मिलूं। मैं गया और बताया गया कि प्रोजेक्ट मंजूर हो गया है और प्रोजेक्ट में हमें दस लाख रुपया दिया गया है। फिर वही सवाल सामने आ गया। मैंने कहा, पैसे से विकास नहीं हो सकता। अगर हो सकता होता तो भारत सरकार कर चुकी होती।"

"क्या भारत सरकार विकास करना चाहती हैं?"

"ये और भी बुनियादी सवाल है. . .देखो हम कहते हैं कि हमारे देश की जाति व्यवस्था में एक सुपर जाति पैदा हो गयी है जो हर जाति से ऊंची है।"

"मैं हंसने लगा, ये कौन सी जाति है सागर साहब?"

"इस जाति को कहते हैं आई.ए.एस." मैं ओर जोर से हंसने लगा।

"क्यों क्या मैं ग़लत हूं?"

"आप सौ फीसदी सच कह रहे हैं।"

"पूरे देश पर यह जाति शासन कर रही है जैसे पहले मान लो ब्राह्मण किया करते थे।"

"हर मर्ज की यही दवा है।"

"इनका जाल इतना भयानक है कि इन्होंने पूरे देश को जकड़ रखा है। अरे भाई कहो, कलक्टर का काम लगान वसूली है, प्रशासन है, पर ये जाति विकास पर भी कब्जा करके बैठ गयी। बड़े से बड़े और तकनीकी से भी अधिक तकनीकी संस्थानों पर छा गयी। कोई भी कारपोरेशन ले लो. . . यही लोग जमे बैठे हैं. . .और ये हैं बुनियादी तौर 'नॉन कमिटेड` लोग। इनका धर्म स्वयं अपना और अपनी जाति का भला करने के अलावा कुछ नहीं है।"

"और ये करप्ट भी है. . .शायद पहले न होते होंगे. . .अब।"

"नहीं, 'करप्शन` तो नौकरशाही का बुनियादी कैरेक्टर है। फ़र्क़ सिर्फ इतना आया है कि अब ये कायदा, कानून, शर्म-हया, क्षेत्र प्रांत छोड़कर खुल्लम खुल्ला भ्रष्ट हो गये हैं. . .और इन्हें राजनेताओं का संरक्षण भी मिल रहा है। वे भी इनके साथ शामिल है. . .अब ऐसे लोग क्या विकास करेंगे?"

"लेकिन इनमें कुछ अच्छे भी होते हैं।" मैंने कहा।

"अरे अच्छे तो कुछ डाकू भी होते हैं. . .पर क्या आप डकैती को अच्छा कहेंगे?" सागर साहब ने हंसकर कहा।

रांची पहुंचकर सागर साहब ने मेरे साथ कुछ ऐसा किया जिसकी उम्मीद नहीं थी और मैं सकते में आ गया। हम दोनों को साथ-साथ गलहौटी गांव जाना था। वही प्रोजेक्ट चल रहा था। सागर साहब ने मुझसे कहा कि उन्हें तो किसी ज़रूरी काम से पलामू जाना है। वे गलहौटी नहीं जा पायेंगे। मैं बस पकड़कर पलेरा चला जाऊं जो मेन हाई वे पर एक छोटा-सा बस स्टाप है। वहां मुझे गलहौटी जाने वाले लोग मिल जायेंगे। गलहौटी पलेरा से बारह किलोमीटर दूर है। ये पैदल का रास्ता है। वहां प्रोजेक्ट का आदमी रविशंकर मिल जायेगा। उसे मेरी विज़िट के बारे में मालूम है। अब मैं बड़ा चक्कर में फंसा। जाहिर है गलहौटी अकेले जाना आसान न होगा। अगर नहीं गया तो यहां तक आना बेकार जायेगा। सागर साहब किसी भी तरह मेरे साथ गलहौटी नहीं जा सकते थे क्योंकि उन्हें पलामू जाना था।

ख़ैर और कुछ हो या न हो, हमने रात खूब जमकर पी। बहुत अच्छी बातचीत हुई और सुबह-सुबह सागर साहब चले गये और मैं अनिश्चय के सागर में डूब गया।

मैं परेला में उतरा तो देखा दो चार छोटी-छोटी लकड़ी की गुमटियों के अलावा और कुछ नहीं है। शाम का चार बज रहा था। बस मुसाफ़िरों को उतारकर आगे बढ़ गयी। मैं एक चाय के खोखे पर आया और पूछा कि गलहौटी जाने वाला कोई है? चाय वाले ने इधर-उधर देखा और बोला, 'नहीं अभी तो नहीं है।`

मैंने यह भी देखा कि चाय वाला कुछ अपनी दुकान बढ़ाने के मूड में है। वह बर्तनों को अंदर रख रहा था।

मैंने उसे एक चाय बनाने को कहा तो वह चाय बनाने लगा।

"अब यहां बस कितने बजे आयेगी?" मैंने पूछा।

"कल सुबह आठ बजे।"

"उससे पहले यहां कोई बस नहीं आयेगी।"

"नहीं", वह चाय बनाता रहा।

मेरे होशो हवास गुम हो गये। रात कहां रहूंगा? ख़ैर अब तो फंस गया था। गलहौटी मैं अकेले पहुंच नहीं सकता था क्योंकि वहां तक जाने के लिए जो पगडण्डी थी वह छितरे पहाड़ों में जाकर खो जाती थी।

चाय पी ही रहा था कि एक आदमी आता दिखाई दिया। चाय वाले ने कहा, 'ये गलहौटी के पास वाले गांव में जायेगा। इससे बात कर लो।`

मैं झपटकर आगे बढ़ा। सफेद कमीज़, पजामे में यह आदमी कहीं स्कूल मास्टर था और अपने गांव जा रहा था। वह मुझे गलहौटी पहुंचा देने पर तैयार हो गया।

पगडण्डी पर चलते हुए उसने मुझसे पूछा, आप तेज़ चलते हैं या धीरे?

मैं क्यों कहता कि धीमे चलता हूं? मैंने कहा, 'तेज़ चलता हूं।` मेरे यह कहते ही वह सरपट रफ्तार से चलने लगा। मैंने भी अपनी रफ्तार तेज़ कर दी लेकिन पन्द्रह मिनट के अंदर ही अंदर लग गया कि मैं उसकी तरह सरपट नहीं चल सकता। मजबूर होकर कहना पड़ा कि 'भाई जी थोड़ा धीमे चलिए।` उसने रफ्तार कम कर दी।

सूरज डूब गया था। पहाड़ियाँ धुंधली छाया में बदल गयी थी। पगडण्डी भी ठीक से नहीं दिखाई पड़ रही थी। अचानक स्कूल मास्टर रुक गया और ज़ोर ज़ोर से कुछ सूँघने लगा।

"क्या सूंघ रहे हैं," मैंने पूछा।

"आसपास कहीं जंगली हाथी का झुण्ड है।" वह बहुत सरलता से बोला और मेरे छक्के छुट गये। यहां तो झाड़ियां छोड़कर ऊंचे पेड़ भी न थे जिन पर चढ़कर जान बचाई जा सकती।

"अब क्या करें।"

"चले जायेंगे।" वह आराम से बोला।

कुछ देर हम खड़े रहे। वह हवा में सूँघता रहा फिर बोला, 'चले गये।` हम लोग आगे बढ़ने लगे। मैं इतना डर गया था कि उससे यह भी न पूछ सका कि उसे सूँघने से कैसे पता चल गया था कि हाथियों के झुण्ड चले गये।

रात नौ बजे के करीब हम गलहौटी पहुंचे। स्कूल टीचर मुझे सीधा प्रोजेक्ट के ऑफिस ले गया जहां रविशंकर सो चुके थे। वे उठे और उन्होंने मुझसे पहला सवाल यह पूछा कि क्या मैं कम्बल लेकर आया हूं? मेरे यह कहने पर कि मुझे नहीं बताया गया था कि कम्बल लेकर जाना और मैं नहीं लाया, वे परेशान से हो गये। बोले, 'चारपाई तो है लेकिन कम्बल नहीं है। रात में सर्दी बढ़ जाती है।`

हम दोनों एक ही चारपाई पर लेटे। रविशंकर ने मेरे सिरहाने की तरफ पैर कर लिए और मैंने भी यही किया। एक कम्बल से हमने अपने को ढंक लिया। सर्दी बढ़ चुकी थी। तेरह किलोमीटर पैदल चलने और मानसिक कलाबाज़ियों की वजह से गहरी नींद आ गयी।

अचानक आधी रात के करीब आंख खुली तो देखा रविशंकर चारपाई से कुछ दूर चूल्हे में आग जलाये ताप रहे हैं। पूछने पर बताने लगे कि आपने सोते में कम्बल खींच लिया था। हम खुल गये थे। सर्दी लगने लगी। हमने सोचा कि हम भी कम्बल खींचेंगे तो आप को सर्दी लगने लगेगी। आप उठ जायेंगे। सो हमने आग जला ली।

मुझे अपने ऊपर शर्म आयी। मैं उठ बैठा। आधी रात हमने चूल्हे के सामने बैठकर आग तापकर गुजार दी।

छः बजे के करीब मैंने उनसे पूछा, "भाई रविशंकर जी यहां चाय-वाय भी कुछ बनती है?"

"बनाते तो हैं. . .पर लकड़ी नहीं है। रात लकड़ी जला डाली।"

"फिर क्या होगा?"

"लकड़ी बीनना पड़ेगी. . .बाहर ही मिल जायेगी।" वह उठने लगा।

"नहीं आप बैठो मैं बीनकर लाता हूं।"

लकड़ियां बीनकर लाया और चाय का पानी चढ़ा दिया गया। ज़िंदगी में मुझे याद नहीं कि इससे पहले मैनें पानी कभी इतनी देर में उबलते देखा हो। आध घण्टा हो गया। पानी उबलने का नाम ही नहीं ले रहा था और लकड़ियां बीनकर लानी पड़ी। अल्लाह अल्लाह करके पानी उबला, चाय बनी।

चाय पीते हुए मैंने कहा, "भाई रविशंकर जी यहां एक स्टोव तो रखा जा सकता है।" वह हंसने लगा। मैं हैरत से उसे देखने लगा।

"सागर साहब स्टोव के खिलाफ हैं।"

"यार बेचारे स्टोव ने सागर साहब का ऐसा क्या बिगाड़ा है।"

वह हंसने लगा "नहीं, सागर साहब कहते हैं यहाँ वह वैसी कोई चीज़ नहीं होना चाहिए जो आदिवासियों के घरों में नहीं होती। मुझे यहां घड़ी भी लगाने की अनुमति नहीं है।" वह खाली कलाइयां दिखाकर बोला।

"आप यहां करते क्या हैं?"

"हम कुछ नहीं करते।"

"आपके कुछ करने के भी सागर साहब खिलाफ हैं क्या?" वह हंसते हुए बोला "ठीक कहा आपने, सागर साहब कहते हैं। हम कौन होते हैं इन आदिवासियों को यह बताने वाले कि यह करो यह न करो।"

"तो श्रीमान जी फिर आप यहां हैं ही क्यों? अपने घर जाइये?" मैंने कुछ व्यंग्य और कुछ प्यार से कहा।

वह खिलखिलाकर हंस पड़ा।

"मेरा काम यह देखना है गांव के लोग सामूहिकता की भावना से प्रेरित होकर क्या कर रहे हैं और जो कर रहे हैं उसमें उन्हें सफलता मिले. . .कोई अड़चन न आये।"

रविशंकर की उम्र मुश्किल से बाइस- तेइस साल है। पटना विश्वविद्यालय से इसी साल सोशलवर्क में एम.ए. किया है और इस प्रोजेक्ट में लग गया है। छः महीने से वह यहां लगातार रह रहा है। सागर साहब आते जाते रहते हैं। रविशंकर ने मुझे विस्तार से छः महीने की कहानी सुनाई। आमतौर पर लोग इस इलाके के आदिवासी गांवों में

पटवारी या पुलिस के सिपाही के साथ आते हैं, अपना काम करते हैं और चले जाते हैं। लेकिन सागर साहब यह चाहते थे कि हमें सरकारी आदमी न समझा जाये। इसलिए हम लोग यहां अकेले ही आये थे। शुरु में न तो कोई हमारे पास आता था, न हमसे बात करता था। पहली रात तो हमने एक पेड़ के नीचे गुजारी थी। उनके बाद कलिया ने वह खपरैल दे दी थी जहां उसके जानवर भी बंधते हैं।"

"बहुत दिलचस्प कहानी है।"

"विश्वास जमाना बहुत टेढ़ी खीर है। हमने धीरे-धीरे विश्वास जमाया। कभी चूके भी, कभी गल़ती भी हुई लेकिन. . ."

"विश्वास कैसे जमा?"

"ब्लॉक ऑफिस के काम, पटवारी के काम. . .इनको एक तरह से सहायता सहयोग देना और बदले में कुछ न लेना. . .ऐसा इन्होंने कभी देखा नहीं है. . .पहले इन्हें हैरत होती थी कि ये कौन लोग हैं? फिर समझने लगे. . .ये जंगल से जड़ी बूटियाँ, झरबेरी के बेर, आंवला और दूसरी चीज़ें जमा करके बाज़ार में बेचा करते थे. . .हमारे सुझाव पर यह काम अब पूरा गांव मिलकर करता है और आमदनी बढ़ गयी। गांव का एक अपना फण्ड बनाया गया है जिसमें दो-दो चार रुपये जमा होते हैं . . .अभी पिछले महीने पूरे गांव ने मिलकर तीन कुएं खोदे हैं. . .मतलब पूरे गांव के जवान लोग लग गये थे। दो-दो तीन-तीन दिन में एक कुआं खुद गया था।"

मैं चार दिन गलहौटी में रहा और पूरी रिपोर्ट तैयार की। इस रिपोर्ट ने भी राष्ट्रीय स्तर का तहलका मचा दिया। योजना आयोग में विशेष बैठक बुलाई गयी। इसके बाद मैं

मध्य प्रदेश के उन आदिवासी क्षेत्रों में गया जहां उद्योग धंधों के कारण आदिवासी उजड़ रहे थे। कारखानों का दूषित पानी नदी की मछलियाँ मार रहा था और गंदा पानी पीने से आदिवासियों में तरह-तरह की नयी बीमारियां फैल रही थी। आदिवासियों की हज़ारों एकड़ जमीन पर उद्योग लग रहे थे, बांध बन रहे थे और जाहिर था कि वहां पैदा होने वाली बिजली उनके लिए नहीं थी। ये रिपोर्ट भी 'द नेशन` में छपी।

एक दिन सक्सेना साहब ने बुलाया कहा कि अब अखबार आदिवासी अंचलों पर उतना बल नहीं देना चाहता क्योंकि यह संवेदनशील मामला है। मुझे लगा मैं पहाड़ पर से गिर गया हूं। मैंने तो आगे पांच साल तक के लिए अपने 'टारगेट` तय कर लिए थे। मैं सक्सेना साहब से बहस क्या करता। एक अजीब तरह की खीज, अपमानित होने का एहसास, गुस्सा और द्वेष की भावना मेरे अंदर भर गयी। हसन साहब ने कहा, ये तुमने 'इण्डस्ट्री` को 'टारगेट` क्यों किया? तुम्हें नहीं मालूम नेशनल चैम्बर ऑफ कामर्स ने तुम्हारी रिपोर्टों पर एडीटर-इन-चीफ को बड़ा सख्त खत लिखा है।

इस पूरे प्रकरण के बारे में शकील को पता चला था तो उसकी आंखों में चमक आ गयी थी। उसे लगा था कि वह मुझे जो कुछ समझाया करता था उसका निचोड़ सामने आ गया है। मेरे घर में ही टेरिस पर विस्की पीते हुए उसने कहा, यार साजिद तुम इन लोगों से लड़ नहीं सकते। तुम सत्ता से टक्कर ले नहीं सकते। तुम्हारे अख़बार का मालिक भी इण्डस्ट्रियलिस्ट है। उसकी भी उसी इलाके के पेपर फैक्ट्री है जिसे प्रदेश सरकार ने बीस हज़ार एकड़ बॉस के जंगल सौ रुपये प्रति एकड़ की दर से नब्बे साल के लिए दे दिये हैं. . .अब बताओ. . .और बिजली ये तो जान है यार इण्डस्ट्री की. . .बड़े बांध नहीं बनेंगे तो बिजली कहां से आयेगी?. . .देखा इन लोगों ने अपना हर मामला जमाया हुआ है. . भई सरकारों से इनके क्या संबंध हैं, तुम्हें पता है। अखबार इनके हैं। पार्लियामेंट में इनके कितने लोग हैं तुम जानते हो। सर्विसेज़ के लोग तो इनके पहले से ही गुलाम हैं. . .कला और संस्कृति पर इनका कब्जा है।"

"तुम्हारा मतलब है कुछ नहीं हो सकता।"

"यार फिर वही मुर्गे की एक टांग. . .तुम्हें किस चीज़ की कमी है. . ."

"है. . .कमी है।"

"ये तुम्हारे दिमाग का फितूर है।" वह हंसने लगा।

मेरे अंदर गुस्सा और बढ़ने लगा। इसलिए कि वह जो कुछ कह रहा है सच नहीं है।

गरजत-बरसत

-Garajat-Barasat in Hindi

1. गरजत-बरसत अध्याय 1
2. गरजत-बरसत अध्याय 2
3. गरजत-बरसत अध्याय 3
4. गरजत-बरसत अध्याय 4
5. गरजत-बरसत अध्याय 5